मासिक

अरफात किरण

रायबरेली

सबसे बडी पीढा

ये कितनी बड़ी पीढ़ा है। हम स्वतन्त्र होते हुए भी स्वतन्त्र नहीं हैं और असलहों सहित सेना रखने के बाद भी निहत्थे हैं। अगर हम एक होकर अमरीका को केवल धमकी दें कि अगर तुमने इराक़ पर या किसी देश पर हमला किया तो अपने किसी समन्दर से तुम्हारा कोई समुन्द्री जहाज़ गुज़रने नहीं देंगे और न अपने आकाश से तुम्हारा कोई सवारी जहाज़ और अपनी सड़क से तुम्हारी कोई गाड़ी नहीं गुज़रने देंगे, तो दुनिया सिर्फ़ दो दिन में हमारे क़दमों में आ जायेगी।

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

MAR 14

₹10/-

इस्लामी दावत

आज की ईसाई दुनिया अपनी गुमराह भौतिकवादी व्यवस्था से तंग आ चुकी है। क्यों वो मानवता के भाव से ख़ाली है। और ईसाई धर्म से इसका संबंध समाप्त हो चुका है। इसलिये कि इसमें अब दीनी कमी को पूरी करने की क्षमता नहीं रही। अतः वो हैरान व परेशान नये धर्म की तलाश में हैं जो उन्हें जीवन की भूल भुलैया से निकाल कर मन्ज़िल का सही मार्गदर्शन करे और इसकी क्षमता इस्लाम के अलावा किसी दूसरे धर्म में नहीं। लेकिन आज हमारे कुछ व्यक्ति इस्लाम को ग़ैरों के सामने भलाई और नेकी से हटकर स्वार्थ और नफ़रत के तौर पर प्रस्तुत कर रहे हैं और जब तक हम इस्लाम का चेहरा नफ़रत और दुश्मनी के तौर पर पश्चिम के सामने पेश करेंगे, हम पश्चिम से इसका जवाब ग़रज़ के सिवा कुछ नहीं पायेंगे। ऐसे हालात में ये ज़रूरी है कि इस्लाम को पश्चिम के सामने एक ऐसे हकीमाना अन्दाज़ में पेश करें जो उसकी मौजूदा ज़िन्दगी को व्यवहारिक और सामूहिक पतन से छुड़ा सके। क्योंकि पश्चिम से लोगों की तबियत उकता चुकी है और वो उससे अलग होना चाहते हैं। इसीलिये वो अपने पेचीदा मसलों का हल तलाश करने में हैरान व परेशान हैं।

लिहाज़ा ऐसी सूरत में ग़ैर मुस्लिम के सामने इस्लाम का रोशन चेहरा ज़ाहिर न किया गया तो फिर इस्लाम उनके दिलों को अपनी ओर लाने में कामयाब नहीं हो सकता और ये दुनिया उसी तरह दर–दर की ठोकरें खाती फिरेगी और ऐसी चीज़ों का सहारा लेगी, जिसको अपने दर्द की दवा समझ बैठेगी और उसकी सैकड़ों मिसालें हमें मिलती हैं। इसीलिये मुसलमान दावत देने वालों पर ये ज़िम्मेदारी है कि वो इस्लामी दावत के लिये सही तरीक़ा अपनायें क्योंकि दावत का काम उन्हीं से जुड़ा है।

ये हक़ीक़त है कि पश्चिम ने ख़ूब तरक़्क़ी की। वो राजनीति और आर्थिक व्यवस्था और सैन्य शक्ति, पूंजी व साधन में बहुत ऊपर तक पहुंच गया है। इसके ज़रिये उसने इन्सान की मुश्किलों को हल करने और दुख़ को ख़त्म करने की कोशिश की। लेकिन उसकी हर कोशिश बेकार साबित हुई। आज पश्चिमी नौजवान का हाल ये है कि वो अपनी समस्याओं का हल तलाश करने के लिये हर वादी की ख़ाक़ छान रहा है। और हर जगह से नाकाम व नामुराद लौट रहा है। ये व्यवहारिक गिरावट और दिमाग़ी कशमकश जिसका आज पश्चिमी नौजवान शिकार है और यही उनकी बीमारी की अस्ल जड़ और बुनियाद है। ऐसे में पश्चिम के सामने केवल एक ही रास्ता है वो ये कि नबियों की शिक्षांए और ख़ासतौर पर आप स0अ0 की दावत पर हां कहें जिनकी दावत ये है कि अल्लाह से संबंध पैदा किया जाये और संतुलन के साथ जीवन के साधन अपनाये जाये। लिहाज़ा हक़ की दावत देने वाले के लिये ज़रूरी है कि उनका जीवन संतुलित और अनुकरणीय हो।

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नद्वी

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:३ मार्च २०१४ ई० वर्ष:६

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक
मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

सम्पादक
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाख़ुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

मुद्रक
मो० हसन नदवी

सह सम्पादक
मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

इस अंक में:

बर्मा के मुसलमान शताब्दी की सबसे पीड़ित क़ौम......२
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

नुस्ख़ा – समाज सुधार का......................३
मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

तौहीदे उलूहियत...................................५
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नहाने के कुछ मसले..............................६
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

ख़ूबसूरती की आड़ में मुस्लिम औरतों पर...........८
जनाब सालेह मन्सूर

राकेट – टीपू सुल्तान की खोज......................९
प्रोफ़ेसर ख़ालिद जावेद

एरियल शेरोन और फ़िलिस्तीनियों का क़त्ले........१३
जनाब अहमद मूर

पति के अधिकार...................................१५
अबू हाजिर मज़ाहिरी

ईसाले सवाब की शरई हैसियत.....................१७
अहसन अब्दुल हक़ नदवी

पर्दे के आड़ में बेपर्दगी............................१८
मौलाना अनवर जमाल क़ासमी

जुरैज की आज़माइश..................................२०
अबुल अब्बास ख़ाँ

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

प्रति अंक 10रू

वार्षिक 100रू0

सम्पादकीय

बर्मा के मुसलमान

शताब्दी की सबसे पीड़ित क़ौम

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

मुसलमानों के ख़ून से रंगीन बर्मा की धरती का इतिहास कई हज़ार साल पुराना है। इस पुरानी सलतनत का नया नाम "म्यांमार" है। इस देश में लगभग पांच प्रतिशत मुसलमान आबाद हैं। लेकिन यहां के मुसलमान हमेशा अत्याचार व हिंसा के शिकार होते रहें हैं। पांच दशकों से सैन्य क्रूरता का शिकार होते रहने के बाद 2011ई0 में लोकतन्त्र स्थापित हुआ। इस लोकतन्त्र के आते ही देश में दंगों की एक लहर चल पड़ी, जिसमें लाखों की संख्यां में मुसलमान मारे गये या दूसरे देशों में शरण लेने पर मजबूर हुए। ये वही लोकतन्त्र है जिसके लिये अपोज़ीशन की लीडर "आन सांग सूची" बीस साल से नज़र बन्द थीं और उन्हें बर्मा में लोकतन्त्र की बहाली की कोशिश के बदले "शांति के लिये नोबेल पुरुस्कार" भी दिया गया।

म्यांमार में मुसलमानों की वर्तमान दयनीय स्थिति जो हम तक पहुंच रही है वो वास्तविकता का दसवां हिस्सा भी नहीं है। म्यांमार का दक्षिणी क्षेत्र है "अराकान" जहां सबसे ज़्यादा अत्याचार हुआ। इस क्षेत्र में किसी भी पत्रकार को क़लम या कैमरा ले जाने की आज्ञा नहीं है, अस्ल में शासन को यहां मुसलमानों का वजूद ही गवारा नहीं। उनकी जायदाद छीन ली गयीं, उनकी शोहरत ख़त्म कर दी गयी और अपने देश में वो बे वतन हो गये।

म्यांमार में मुसलमानों के क़त्ल का वाक़्या कोई पहला और अनोखा नहीं है। हाल ही में म्यांमार के मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र रखाइन में ताज़ा हमलों में तीस से अधिक मुसलमान शहीद हुए और दर्जनों घरों को आग लगा दी गयी। यहीं रखाइन में 2002 ई0 में बौद्धों ने बरबर्ता की सीमा पार कर दी थी। 200 लोग मारे गये और हज़ारों लोग बेघर हुए थे। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार रोहन्गिया के मुसलमान दुनिया की सबसे ज़्यादा सतायी जाने वाली क़ौमों में से एक हैं। एक अनुमान के अनुसार पिछले कुछ महीनों के दौरान लगभग 35000 मुसलमान शहीद और पचास हज़ार से ज़्यादा ज़ख़्मी किये जा चुके हैं, जबकि एक लाख से ज़्यादा लापता हैं और लगभग उतने ही मुसलमान हमलावरों के डर से दलदली इलाक़ों और जंगलों में गुज़र–बसर करने पर मजबूर हैं।

आज म्यांमार में जो कुछ भी हो रहा है उसे केवल कुछ हज़ार मुसलमानों के क़त्ल की संज्ञा नहीं दी जा सकती है बल्कि ये व्यवस्थित रूप से मुसलमानों की नस्लों का ख़ात्मा है और शासन की घोषणा के अनुसार यहां का मुसलमान नागरिक एंव क़ानूनी अधिकारों के हक़दार भी नहीं हैं। आला अफ़सर इस बात का दावा करते हैं कि मुसलमान इस देश के नागरिक नहीं हैं। जबकि हक़ीक़त ये है कि मुसलमान यहां पर सदियों से आबाद हैं और रोहन्गियां और रखाइन दोनों इलाक़े ख़ालिस मुस्लिम आबादी वाले थे। रखाइन तो 1784ई0 तक तो एक आज़ाद मुस्लिम देश था जिस पर बर्मा ने क़ब्ज़ा कर लिया था। लेकिन इसके बावजूद बर्मा का नारा है कि "बर्मा सिर्फ़ बर्मियों का है" ये स्थिति फ़िलिस्तीन की स्थिति से बिल्कुल अलग नहीं। वरना क्या इस हक़ीक़त से इनकार मुमकिन है कि बुद्धमत का आरम्भ भारत से हुआ, जिसे इस देश से निकाल बाहर कर दिया गया और फिर उसने बर्मा को अपना केन्द्र बना लिया।

बर्मा में मुसलमानों के क़त्लेआम को "शताब्दी की बरबर्ता" की संज्ञा देना उचित होगा। इस देश में मुस्लिम नस्लकुशी के वाक़्ये दिल को बहुत ही चोट पहुंचाने वाले हैं। ज़्यादातर लोगों को आग लगाकर ज़िन्दा ही भट्टी में झोंक दिया गया, बच्चों और औरतों को भी दरिन्दगी से क़त्ल किया गया। लाशों के ढेर, जले हुए मकान, और ख़ून की धारों से नहीं लगता कि यहां इन्सानित ज़िन्दा है या गौतम बुद्ध को मानने वाले दरिन्दों से कम हैं।

बुद्धियों के आतंक से जान बचाकर जो मुसलमान क़रीबी देशों में पनाह लेने पर मजबूर हुए उन्हें भी बदतरीन स्थिति का सामना करना पड़ रहा है। बंग्लादेश और थाइलैन्ड में उनके साथ बहुत ही बुरा सुलूक किया जाता है।

बर्मा के मुसलमान न किसी देश के भगोड़े हैं, न किसी देश के ग़द्दार हैं, न उन्होनें कोई अमानवीय हरकत की है, न किसी प्रकार की अव्यवहारिकता या सामाजिम जुर्म किया है। हां उनका "संगीन जुर्म" सिर्फ़ इतना है कि उन्होंने अपनी दुनिा व आख़िरत की कामयाबी के लिये इस्लाम को अपनाया और आज की "धार्मिक दुनिया" इस जुर्म को किसी हालत में माफ़ नहीं कर सकती। लेकिन बर्मा के मुसलमान ग़ैरों से ज़्यादा अपनों से डरे हुए हैं जो सत्ता के नशे में इतने चूर हैं कि उन्हें दुनिया की पीड़ित क़ौम का ख़्याल तक नहीं!!

नुस्ख़ा - समाज सुधार का

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

बात अगर इस्लाम की की जाये तो पूरे यक़ीन के साथ ये बात कही जा सकती है कि इस्लाम ने जिस तरह व्यक्तिगत जीवन के मार्गदर्शन के नियम निश्चित किये हैं, उसी तरह व्यक्तियों के सामूहिक जीवन को भी श्रेष्ठ बनाने के लिये हदीसों की शक्ल में खुली हुई हिदायतें और रोशन शिक्षांए हमारे सामने रख दीं। हैरत होती है, किसी और पर नहीं अपने ऊपर कि इन साफ़ हिदायतों और इन रोशन शिक्षाओं का इतना बड़ा भण्डार रखते हुए भी हम अपने समाज के बिगाड़ का रोना रोते रहते हैं।

आपकी बात मान ली कि सिर्फ़ रोना ही नहीं रोते, कोशिश भी करते हैं, उपाय भी करते हैं, ख़र्च करने वाले इस राह में खुलकर ख़र्च भी करते हैं, बोलने वाले इस विषय पर भाषण पर भाषण और लिखने वाले लेख पर लेख लिखते हैं। लेकिन क्या किया जाये कि उन कोशिशों का उस तरह नतीजा सामने नहीं आता जिस तरह की कोशिशें उस राह में की जाती हैं, तो अब इसमें हमारा क्या कुसूर?

छोड़िये बात कुसूर की, आप ये बताइये कि डाक्टर अच्छे से अच्छा नुस्ख़ा लिख दे। दवा बनाने वाला अच्छी से अच्छी दवा बना दे। नुस्ख़ा हमारी जेब में सोते हुए भी रहे, जगते में भी रहे। ख़्यालों में चूरन हम फ़ांकते भी रहे और दवा का शर्बत दिन रात आंखों से अपनी पीते भी रहें तो क्या हमारी बीमारी दूर हो जायेगी? बीमारी से क्या हमको फ़ायदा मिल जायेगा?

चलिये हकीम का ये नुस्ख़ा सोते में नहीं जागते में, ख़्यालों में नहीं हक़ीक़त में, आंखों से नहीं मुंह से, हम अपने नहीं दूसरों के पेट में पहुंचाते रहें तो क्या इस तरह हमारी बीमारी दूर हो जायेगी? और क्या ये नुस्ख़ा हमारे लिये कारगर साबित होगा?

नुस्ख़ा तो हम रखते हैं लेकिन इस्तेमाल इसका दूसरों पर करते हैं, सलाम करे तो दूसरा, रहम करे तो दूसरा, बीमार को देखे तो दूसरा, माफ़ करे तो दूसरा, ख़िदमत करे तो दूसरा, गुस्सा न करे तो दूसरा, ख़्याल करे तो दूसरा, अच्छे से मिले तो दूसरा, मुस्करा कर मिले तो दूसरा, राज़ को राज़ रखे तो दूसरा, मेहमाननवाज़ी करे तो दूसरा, मशवरा करे तो दूसरा, पड़ोसी का हक़ अदा करे तो दूसरा, रिश्ता जोड़े तो दूसरा, अपना हक़ छोड़े तो दूसरा, दूसरा–दूसरा तो क्या समाज दूसरो से बनता है? क्या खुदा की इस ज़मीन पर सिर्फ़ दूसरे बसते हैं? क्या आप स0अ0 का आना सिर्फ़ दूसरों के लिये हुआ? क्या इस्लामी अख़लाक़ व आदाब का संबंध सिर्फ़ दूसरों से है?

अफ़सोस कि समाज के सुधार का ये नुस्ख़ा जो आप स0अ0 की हदीसों की शक्ल में हमको मिला, उसके इस्तेमाल की दूसरों को हमने दावत दी और पूरे ज़ोर व शोर से दी लेकिन खुद हम इसका इस्तेमाल न कर सके। अगर हमने इस नुस्ख़े को अपने ऊपर इस्तेमाल कर लिया होता तो आज हमें ज़रूरत न पड़ती जलसों के कराने की, किताबों के प्रचार की, लिट्रेचर के बांटने की, समाज के सुधार के लिये लोगों के दौरों की?

क्या आज से चौदर सौ साल पहले भी इसी तरह के दौरे होते थे? किताबों के प्रचार के लिये यही सब इन्तिज़ाम थे? वक्ताओं को लाने और ले जाने के आजकल के ये सारे साधन उपलब्ध थे? जी नहीं! उस समय ये सबकुछ नहीं था और अगर कुछ था तो सिर्फ़ अमल था और उसी अमल की बदौलत उस समय का पूरा समाज इस्लामी रंग में रंगा हुआ था। अक़ीदा इस्लामी, इबादतें इस्लामी, मामले इस्लामी, अख़लाक़ इस्लामी, रहन–सहन इस्लामी, बातचीत के आदाब इस्लामी, मिलने–जुलने के तौर–तरीक़े इस्लामी, उस समय का इस्लाम ज़िन्दा और हरकत करता हुआ था, चलता फिरता था, मुसलमान के साथ आता जाता था, खुद कुरआन करीम इस बात का गवाह है: "और हमने उसको (मुसलमान) एक रोशनी (इस्लाम) मुहय्या कर दी जिसको लेकर वो लोगों के बीच चलता–फिरता है।"

ये आयत साफ़ ऐलान करती है कि इस्लाम का मतलब ये नहीं है कि मुसलमान सिर्फ़ अक़ीदे व इबादत

को लेकर सबसे अलग–थलग होकर कोने में जाकर बैठ जाये, बल्कि इस्लाम की मुसलमान से ये मांग है कि वो आम इन्सान के बीच रहे, उनसे मामले करे, उनके हक़ अदा करे, इस्लामी अख़लाक़ का प्रदर्शन करे, जहां भी जाये अपने इस्लामी किरदार के साथ, इस्लामी श्रेष्ठता के साथ, इस्लामी आदाबों के साथ, इस्लामी शिक्षाओं के साथ जाये, जहां रहे मुसलमान बनकर रहे और जो काम करे मुसलमान बनकर करे।

यक़ीनी बात है कि वो किसी का पड़ोसी होगा, किसी का रिश्तेदार होगा, किसी का बेटा होगा, किसी का बाप होगा, किसी का पति होगा, किसी का भाई होगा, कभी वो किसी पर नाराज़ होगा, कभी उसे किसी पर गुस्सा आयेगा, कभी उसका किसी से झगड़ा होगा, कभी उससे किसी से सुलह होगी, कभी उसका वास्ता छोटों से पड़ेगा, कभी उसका मामला बड़ों से होगा, कभी उसको किसी से मुहब्बत होगी तो कभी उसको किसी से नफ़रत होगी, कभी उसका दिल किसी की ओर आकर्षित होगा तो कभी उसका दिल किसी से बेज़ार होगा, कभी वो दुकान पर कुछ ख़रीदता हुआ नज़र आयेगा तो कभी वो दुकान पर कुछ बेचता हुआ दिखाई देगा, उसको सड़क पर चलना भी है, घरों के सामने से गुज़रना भी है, घर का कूड़ा भी फेंकना है, अपनी सवारी को सड़क पर खड़ा भी करना है, दूसरों के यहां जाना भी है और उनको अपने यहां बुलाना भी है, इस्लाम की मांग ये है कि ये सारे मामले, ये सारे रिश्ते, ये सारे संबंध और जीवन की ये सारी समस्यांए इस्लामी क़ानून के तहत पूरी की जायें।

इस्लाम के चार मूलभूत तत्व हैं, नमाज़, रोज़ा, ज़कात, हज, हम इनको इबादत के तौर पर ही जानते हैं, और इबादत के तौर पर ही उनकी बात करते हैं, लेकिन ये नहीं ग़ौर करते कि इन इबादतों का मक़सद क्या है? देखिये अल्लाह इस बारे में क्या कहता है: "नमाज़ पढ़िये, बेशक नमाज़ बेहयाई और बुरे कामों से रोकती है।" (अनकबूतः 45)

रोज़े के बारे में क्या कहता है: "ऐ ईमान वालों! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किये गये हैं जिस तरह तुमसे पहले लोगों पर फ़र्ज़ किये गये थे ताकि तुम्हारे अन्दर तक़वा पैदा हो।" (सूरह बक़राः 183)

ज़कात के बारे में क्या कहता है: "ऐ पैग़म्बर आप उनके मालों में से सदक़ा वसूल करें जिसके ज़रिये आप उनको गुनाहों से और बुरे अख़लाक़ से पाक करें।"

हज के बारे में कहता है: "हज के कुछ तय महीने हैं इसीलिये जो शख़्स इन महीनों में हज लाज़िम करे तो हज के दौरान न वो कोई गन्दी बात करे और न कोई गुनाह करे और न किसी से झगड़ा।"

नमाज़ बुरी बातों और बुरे कामों से रोकती है। ज़कात अमीर व ग़रीब को उल्फ़त व मुहब्बत की डोरी में बांधती है। रोज़े के सिलसिले में तो आप स0अ0 का ये इरशाद ही है कि रोज़ा नाम ही है बेहूदगी और बुरे कामों से बचने का और हज के तो दिन ही तरबियत के हैं, झगड़े से बचने और ग़लत कामों से दूर रहने के।

नमाज़ के बारे में तो हदीस क़ुदसी में यहां तक आया है: अल्लाह तआला का इरशाद है: मैं नमाज़ उसी की क़ुबूल करूंगा जिसके अन्दर नमाज़ के ज़रिये तवाज़ो पैदा होगा, जो मेरी मख़लूक़ पर ज़ुल्म न करेगा, जो मेरी नाफ़रमानी के साथ रात नहीं गुज़ारेगा, जो दिन मेरे ज़िक्र के साथ बितायेगा, जो ग़रीब, मुसाफ़िर, बेवा और ज़ख़्मी के साथ रहम दिली का मामला करेगा। (मुसनद अलबज़ार)

रोज़ा, नमाज़, हज, ज़कात की इन हिकमतों से इस बात का अन्दाज़ा बख़ूबी लगाया जा सकता है कि इस्लाम में कितनी अहमियत है अख़लाक़ को संवारने और समाज को आदर्श बनाने की।

अब ज़रा सोचिये कि इन इबादतों का असर हमारे समाज पर नहीं पड़ रहा है, हमारा व्यवहार इन इबादतों को अदा करने के बावजूद बेहतर नहीं हो रही है, हमारी सोच, हमारा मिज़ाज, हमारे काम करने का तरीक़ा, हमारे रहन–सहन में इस्लाम की कोई छाप नज़र नहीं आ रही है। तो कहने वाला हमारे लिये भी वही बात कह सकता है जो मन्दिर में घन्टा बजाने वाले के संबंध में उसने की थी कि सुबह से शाम तक न जाने कितनी बार घन्टा बजता है, लेकिन समाज पर इस घन्टे का कोई असर नहीं पड़ता, घंटे का असर अगर समाज पर नहीं होता तो कोई आश्चर्य की बात नहीं क्योंकि घन्टा बजाने का मक़सद समाज में बदलाव लाना नहीं है बल्कि केवल अपनी आस्था को प्रदर्शित करना और अपने हिन्दू होने की घोषणा करना है, लेकिन हमारी इबादतों का मामला घंटों से अलग है, हमारी इबादतों में अख़लाक़ को संवारने की ओर ज़ोर भी दिया गया है और समाज को मिसाली बनाने की दावत भी।

इस्लामी अक़ीदा

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तौहीदे उलूहियतः इसको तौहीद–ए–इबादत भी कहते हैं। इसका मतलब ये है कि इबादत की सभी क़िस्मों को सिर्फ़ अल्लाह के लिये ख़ालिस कर लिया जाये। जैसे दुआ, नज़र, क़ुर्बानी, , आस्था के वो काम जो सिर्फ़ अल्लाह के लिये ठीक हैं। जैसे सजदा, रूकुअ इत्यादि। अर्थाथ ये कि इबादत की सारी क़िस्में ज़ाहिरी हों या बातिनी (अन्दरूनी) सिर्फ़ अल्लाह के लिये ख़ालिस कर ली जायें। उनमें से किसी में भी अल्लाह के साथ किसी को भी शरीक न किया जाये। चाहे वो नबी हो या फ़रिश्ता, वली हो या शहीद, यही वो तौहीद है जिसका ज़िक्र कुरआन मजीद की इन आयतों में किया गया हैः "हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझसे ही मदद चाहते हैं" (सूरह फ़ातिहाः 4) "उसकी की इबादत करो और उसी पर भरोसा रखो।" (सूरह हूदः 123) "आसमानों और ज़मीन का रब और जो कुछ इनके दरमियान है, बस उसी की इबादत कीजिये और उसी की इबादत पर जमे रहिये कि क्या आप उसका कोई हमसर जानते हैं।" (सूरह मरियमः 65)

"इला" कहते हैं उसको जो इबादत के लायक़ हो। मक्का के मुश्रिक चूंकि अल्लाह के साथ दूसरों की इबादत करते थे, इसलिये उन्होंने बहुत से माबूद बना लिये थे। एक "इला" का उनके यहां कोई विचार नहीं था। इसीलिये जब रसूलुल्लाह स0अ0 ने सिर्फ़ एक ही रब की इबादत की दावत पेश की तो उनको बड़ा ताज्जुब हुआ। कुरआन मजीद ने उसको यूं नक़ल किया हैः

"उन्होंने अपने माबूदों की जगह एक ही माबूद रहने दिया, वाक़ई ये बहुत ही अजीब बात है।"

अब उन दोनों बातों को समझने की ज़रूरत है। ऊपर गुज़र चुका है कि वो रब को एक मानते थे और उसी को अस्ल ख़ालिक़ व मालिक समझते थे, लेकिन इबादत में दूसरों को भी शरीक करते थे और बहुत से माबूदों की इबादत के विचारक थे। इबादत में शिर्क करने की वजह से उनको मुश्रिक कहा गया और आप स0अ0 ने उनको तौहीद–ए–इबादत और तौहीदे उलूहियत की दावत दी और फ़रमायाः "मान लो कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं कामयाब हो जाओगे।" माबूद कहते ही उसको हैं जिसकी इबादत की जाये। कुरआन मजीद में जगह–जगह आया हैः "और तुम्हारा माबूद एक ही माबूद है उसके इलावा कोई माबूद नहीं है वही बहुत रहमान और रहीम है।" (सूरह बक़राः 163) "और जो अल्लाह के साथ किसी दूसरे माबूद को पुकारे और उसकी उसके पास कोई दलील भी न हो तो इसका हिसाब उसके रब के पास होगा, वो काफ़िरीन को कामयाब नहीं करता।" (सूरह अलमोमिनीनः 117)

अरब के मुश्रिक अल्लाह तआला के वजूद को मानते थे। ज़मीन व आसमान का ख़ालिक़ उसी को जानते थे। मुश्किल वक़्त में उसी को पुकारते थे। उसको अपना रब समझते थे। मगर इसके बावजूद अल्लाह ने उनको मुश्रिक क़रार दिया और आप स0अ0 ने ज़िन्दगी भर उनसे जंग जारी रखी। इसका कारण केवल ये है कि वो अल्लाह को ख़ालिक़ व मालिक मानने के बावजूद बीच के वास्तों के इस तौर पर क़ायल थे कि उनकी नज़र व नियाज़ करने और वो काम जो अस्ल में इबादत हैं, उन काम में वो बीच के वास्तों को शरीक कर लिया करते थे। इनको इस शिर्क से रोका गया है और तौहीद की खुली दावत दी गयी हैः "हमने ठीक–ठीक किताब आप पर उतारी है। दीन को उसी के लिये ख़ालिस करके उसकी इबादत करते रहिये।"

उन्होंने इसका जो जवाब दिया उसको कुरआन मजीद ने नक़ल किया हैः "हम तो उनकी इबादत सिर्फ़ इसलिये करते हैं ताकि वो हमको खुदा से क़रीब कर दें।"

यही कारण है कि अल्लाह तआला ने उनके बारे में फ़रमायाः "उनमें अक्सर अल्लाह को मानते हैं मगर इस तरह कि उसके साथ दूसरों को शरीक करते हैं।"

अरब के मुश्रिक इबादत में ग़ैरो को शरीक करते थे और कहते थे कि ये शिर्क नहीं है। ये शिर्क इस सूरत में होगा जब हम ग़ैरों को ख़ालिक़ व मालिक समझेंगे। उपरोक्त आयतों में इसकी काट की गयी है और इसको शिर्क करार दे दिया गया है।

गुस्ल के कुछ मसले

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

इस्लाम में पाकी की बहुत अहमियत है। कुरआन मजीद में इरशाद है: "अगर तुम नापाक हो जाओ तो अच्छी तरह पाकी हासिल कर लिया करो।" और हज़रत अबू मालिक अशअरी रज़ि0 से मुस्लिम शरीफ़ में एक रिवायत नक़ल की गयी है जिसमें रसूलुल्लाह स0अ0 ने पाकी को आधा ईमान बताया है। एक दूसरी हदीस में रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया कि जन्नत की कुंजी नमाज़ है और नमाज़ की कुंजी पाकी है। (रवाह अहमद)

पाकी की बुनियादी तौर पर दो क़िस्में हैं:

1– एक ये कि बदन, लिबास और जिस जगह नमाज़ पढ़ना है उसका ज़ाहिरी गन्दगी जैसे मल–मूत्र या ख़ून इत्यादि से पाक होना। इसको अस्ली या ज़ाहिरी नजासत (गन्दगी) से पाकी हासिल करना कहा जाता है।

2– पाकी की दूसरी क़िस्म ये है कि इन्सान मानवी नजासत (गन्दगी) से पाक हो। मानवी या हुक्मी नजासत उन चीज़ों को कहा जाता है जिनके होने पर वज़ू या गुस्ल का हुक्म दिया गया हो। उनको मानवी या हुक्मी नजासत कहा जाता है। जिन चीज़ों के होने पर नहाने का हुक्म हो उसके होने पर हमें बदन पर कोई ज़ाहिरी गन्दगी नहीं नज़र आती, लेकिन शरीअत ने पूरे बदन को नजिस क़रार देकर उसे धोने का हुक्म दिया। इसी तरह जिन चीज़ों से वज़ू टूट जाता है, उनके होने पर वज़ू के अंगों पर ज़ाहिरी तौर पर कोई नजासत नज़र नहीं आती लेकिन शरीअत ने उनको धोने का हुक्म दिया। इसलिये इनको हुक्मी नजासत कहा गया कि शरीअत ने उन पर ख़ास हालात में नजासत का हुक्म लगाया है। वज़ू वाजिब हो जाये तो उसको "हद्से असग़र" और गुस्ल वाजिब हो जाये तो उसे "हद्से अकबर" का नाम दिया गया है।

गुस्ल कब फ़र्ज़ है:

बुनियादी तौर पर गुस्ल तीन कामों में से किसी एक के पेश आने से फ़र्ज़ होता है।

1– मर्द या औरत का जनबी (नापाक) (सहवास करना या स्खलित हो जाना) हो क्योंकि अल्लाह तआला का इरशाद है, "अगर तुम जनाबत (सहवास करना या स्खलित हो जाना) की हालत में हो तो ख़ूब अच्छी तरह पाकी हासिल करो।"

2– औरत की माहवारी का समाप्त हो जाना।

3– औरत का प्रस्व रक्त बन्द होना। इसलिये कि कुरआन मजीद में माहवारी के संबंध में इरशाद है, "वो आपसे माहवारी के बारे में सवाल करते हैं तो आप फ़रमा दीजिये कि वो एक गंदगी है तो माहवारी में औरत से अलग रहो और वो जब तक पाक न हो जायें उनको क़रीब मत करो तो जब वो पाक हो जायें तो जैसे अल्लाह ने तुम्हें बताया है उसके अनुसार उनसे संबंध स्थापित करो बेशक अल्लाह तौबा करने वालों और पाक साफ़ रहने वालों को महबूब रखता है।"

हदीस शरीफ़ में हज़रत उम्मे सलमा रज़ि0 की लम्बी रिवायत है कि, "(जब माहवारी की हालत ख़त्म हो जाये तो उन्हें चाहिये कि नहायें) जहां तक प्रस्व के समापन पर गुस्ल वाजिब होने का संबंध है तो ये उम्मत की सहमति से साबित होता है।" (बदाया: 1/152)

जनाबत (नापाकी) कब साबित होती है:

जनाबत दो चीज़ों पर साबित होती है–

1– एक सूरत तो ये है कि आनन्द के साथ मनी का स्खलन हो जाये चाहे गन्दे विचारों के कारण या स्वप्नदोष या हस्तमैथून जैसे किसी कारण से और चाहे ये स्खलन सोते में हो या जागने की हालत में हो। (हिन्दिया 1/14)

इसी से ये बात भी साफ़ हो गयी कि अगर मनी सहवास के बिना ही निकल गयी जैसा कि धात इत्यादि की बीमारी में हो जाता है तो उससे गुस्ल वाजिब नहीं होगा। (मुहीत: 1/229)

2– जनाबत का दूसरा कारण सम्भोग है

इससे भी इन्सान जुनबी (नापाक) हो जाता है और उस पर नहाना वाजिब हो जाता है चाहे मनी निकले या न निकले। (बदायाः 1/147) इसलिये कि हदीसों में इसका साफ़ हुक्म आता है। अबूहुरैरा रज़ि0 की मुत्तफ़िक़ अलैह रिवायत में है, "(जब तुममे से कोई सम्भोग करे तो गुस्ल वाजिब है चाहे मनी न गिरे) जब कोई व्यक्ति जनबी हो जाये तो उसको चाहिये कि जल्द से जल्द नहा ले लेकिन अगर नहाने से पहले कुछ खाने–पीने या सोने का इरादा है तो सुन्नत ये है कि वज़ू करने के बाद ऐसा करे, इसलिये कि हज़रत आयशा रज़ि0 की मुत्तफ़िक़ अलैह हदीस में है, (आंहज़रत स0अ0 जब जनबी होते तो आप स0अ0 नमाज़ वाला वज़ू कर लिया करते थे)" इसी तरह हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि0 की रिवायत है कि हज़रत उमर रज़ि0 ने आंहज़रत स0अ0 से ज़िक्र किया कि वो रात के वक़्त नापाक हो जाते हैं। तो आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमाया कि वज़ू कर लिया करो, शर्मगाह धो लिया करो, फिर सो जाओ। (बुख़ारी, मुस्लिम)

मतलब ये कि इस हालत में पहले शर्मगाह धो लो फिर वज़ू करके सो जाओ, उसी वक़्त गुस्ल ज़रूरी नहीं है। ये भी मुस्तहब है कि एक बार सम्भोग करने के बाद दोबारा सम्भोग करना हो तब भी बीच में वज़ू कर लिया जाये। मुस्लिम शरीफ़ में हज़रत अबूसईद खुदरी रज़ि0 से रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमाया जब तुममें से कोई सम्भोग करे या दोबारा करना चाहे तो दोनों के बीच उसे वजू कर लेना चाहिये।

नहाने में तीन चीज़ें फ़र्ज़ हैंः

1– कुल्ली करना 2– नाक में पानी डालना 3– पूरे बदन में इस तरह पानी डालना कि कोई हिस्सा सूखा न रहने पाये। (हिन्दियाः 1/13)

अगर कोई उपरोक्त तरीक़े के मुताबिक़ गुस्ल करे तो गुस्ल हो जायेगा लेकिन अगर गुस्ल की सुन्नतों का एहतिमाम करते हुए गुस्ल करे तो ज़ाहिर बात है कि ये ज़्यादा अज्र व सवाब होगा।

गुस्ल की सुन्नतें निम्नलिखित हैः

1– गुस्ल की नियत करे 2– बिस्मिल्लाहि पढ़े 3– गट्टों तक दोनो हाथ तीन बार धोए 4– शर्मगाह धोए, वहां कोई नजासत हो या न हो 5– अगर बदन में कहीं ज़ाहिरी नजासत लगी है तो उसको धोए 6– पूरा वज़ू करे 7– पूरे बदन पर पानी डाले और पानी डालने का तरीक़ा ये है कि पहले सर पर तीन बार पानी डाले फिर दायें कंधे पर फिर बायें कधें पर तीन–तीन बार पानी डाले फिर फिर सारे बदन पर। 8– मुस्तहब ये है कि बदन की सफ़ाई रगड़–रगड़ कर करे। 9– जहां गुस्ल कर रहा है वहां पानी एकत्र हो जाता है तो वज़ू करते वक़्त पैर न धोए बल्कि गुस्ल मुकम्मल होने के बाद वहां से हट कर पैर धोये।

ये हुक्म बहुत सी हदीसों से साबित हैं। हज़रत आयशा रज़ि0 की मुत्तफ़िक़ अलैह हदीस में है कि नबी करीम स0अ0 जब जनाबत से गुस्ल करते तो आप बर्तन में हाथ डालने से पहले उनको धोते थे फिर दाहिने हाथ से बायें हाथ पर पानी डालते थे और शर्मगाह धोते फिर वज़ू करते फिर सर पर तीन बार पानी डालते फिर पूरे जिस्म पर पानी डालते। हज़रत मैमूना रज़ि0 की मुत्तफ़िक़ अलैह रिवायत में पैर बाद में धोने का ज़िक्र साफ़ मिलता है।

अगर किसी औरत की चोटी पहले ही से बंधी हुई हो और उसे गुस्ल की ज़रूरत पेश आ जाये तो उस पर चोटी खोलना लाज़िम नहीं है बल्कि बालों की जड़ तक पानी पहुंचाना काफ़ी है। लेकिन अगर बाल पहले ही से खुले हुए हों तो सभी बालों को धोना भी ज़रूरी होगा। (हिन्दियाः 1/3) ये हुक्म उम्मे सलमा रज़ि0 की मुस्लिम में नक़ल की गयी एक रिवायत से साफ़ साबित होता है।

अगर गुस्ल कर लेने के बाद मनी निकले तो अगर जनाबत पेश आ जाने के बाद पेशाब किया या सो गया या फिर चला फिरा, फिर नहाने के बाद ऐसा हुआ तो फिर से नहाने की ज़रूरत नहीं है, लेकिन अगर इन कामों को अन्जाम देने से पहले नहा लिया, फिर मनी निकली तो दोबारा नहाना होगा। (हिन्दियाः 1/14)

बहुत से लोग गुस्ल करने के बाद नमाज़ पढ़ना हो तो फिर से वज़ू करना ज़रूरी समझते हैं, ध्यान रहे कि ये सही नहीं है इसलिये कि मुस्लिम शरीफ़ में हज़रत आयशा रज़ि0 की रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 नहाने के बाद वज़ू नहीं किया करते थे। इसलिये कि गुस्ल करने से वज़ू खुद ब खुद हो जाता है, लिहाज़ा अब वज़ू करके पानी बहाना बेजा ख़र्च में दाख़िल होगा, बेहतर ये होगा कि इससे परहेज़ किया जाये। वल्लाहु आलम बिस्सवाब।

फ़ैशन के नाम पर सामाजिक बिगाड़

सालेह मन्सूर

पश्चिमी सभ्यता दीनी समाज की तुलना में एक बनावटी सभ्यता है। इसके फैलाव व वृहदता की गति में बहुत तेज़ी आ गयी। अब उन्होंने ऐसे तरीके खोजे जो सीधा सीधा हमारे अक़ीदे के बिगाड़ और गुमराही का कारण तो नहीं बनते यद्यपि उनके कारण से मुसलमान अन्दर ही अन्दर रूहानी एतबार से खोखले होते जाते हैं। वो ईमान व इस्लाम का दावा करने के बावजूद दीनी समाज से दूर रहते हैं। इन तरीक़ों का इज़हार रेडियो, टीवी, इन्टरनेट, अख़बार व पत्रिकाएं, किताबें, नावेल, अफ़साने, विज्ञापन, ड्रामे, संगीत और फ़िल्म के द्वारा होता रहता है। इन तरीक़ों में से एक तरीक़ा "ख़ूबसूरती" का है जिसे मुस्लिम औरतें में तेज़ी से प्रचलित किया जा रहा है। मीडिया औरतों को ख़ूबसूरत बनने, ख़ूबसूरत दिखाई देने और ख़ूबसूरती अपनाने के लिये अमरीका और यूरोप की तैयार की हुईं चीज़ों को इस्तेमाल करने की भरपूर तालीम देता है। इस उद्देश्य के लिये यहूदियों व नसरानियों ने इस्लामी दुनिया के बड़े शहरों में "ब्यूटी पार्लर" का एक जाल सा बिछा दिया है। ये ब्यूटी पार्लर "इज़्ज़त व इफ़्फ़त की क़त्ल गाह" के बराबर हैं। ज़ाहिर में उनकी स्थापना का उद्देश्य औरतों की ख़ूबसूरती है मगर पर्दे के पीछे अक़ीदे के स्तर पर क़ुरानी "हिजाब" से बग़ावत कराने फ़ैशन और दूसरे तरीक़ों के ज़रिये सुन्नते रसूल स0अ0 और आप स0अ0 की पैरवी से रोकने और नमाज़ जैसे अहम काम से रोकने और क़ुरआन के हुक्म से दूर करने का उपाय है; इसीलिये एक मुस्लिम औरत फ़ैशन इत्यादि करवाकर जहां एक ओर लानत की हक़दार बनती है वहीं उसमें आकर्षण उत्पन्न होता है। इसलिये कि ब्यूटी पार्लर से छुट्टी पाने के बाद औरत कभी नहीं चाहेगी कि वो थोड़ी देर बाद वज़ू करके इतनी मेहनत से किये गये मंहगे मेकअप को पानी की नाली में बहा दे; इसी तरह ये मेकअप इस बात पर भी मजबूर करेगा कि बुर्क़ा व नक़ाब को फ़िलहाल एक तरफ़ रख दिया जाये ताकि कपड़े के बार–बार चेहरे पर लगने से मेकअप ख़राब न हो।

दूसरा तरीक़ा कास्मेटिक का है जो बुर्क़ा व पर्दा व नमाज़ की अदायगी में ही रोड़ा नहीं है बल्कि पाकी में भी रूकावट है। ज़्यादातर उच्च स्तर और देर तक असर रखने वाले कास्मेटिक अमरीका व यूरोप से मंगाये जाते हैं। उन्हें हलाल व हराम के फ़र्क़ के बग़ैर तैयार किया जाता है। इन कास्मेटिकों में बहुत सी ऐसी चीज़ें होती हैं जिन पर पानी असर नहीं करता जैसे नेल पॉलिश इत्यादि; इसीलिये जब एक मुस्लिम औरत जब इन कास्मेटिक का प्रयोग करती है तो उनकी पाकी की कोई ज़मानत नहीं दी जा सकती है। एक और तरीक़ा "ज़न" को "नाज़न" बनाने का है कि औरतों को लिबास के नित नये फ़ैशनों के ज़रिये दीन से अनाकर्षित किया जाता है। आजकल मुस्लिम समाज की औरतों में जिस प्रकार के फ़ैशन चलन में हैं और जिस प्रकार के नये–नये डिज़ाइन आ रहे हैं लगता है कि वो तन ढ़ांकने के बजाये उसे नंगा करने में ज़्यादा सहयोगी हैं।

अब देखिये कि कहने को मामूली और अहानिकारक नज़र आने वाली चीज़ दीनी हुक्म से इनकार करने पर कैसे ग़ैर मामूली अन्दाज़ में मजबूर कर रही है। आरम्भ में तो मामूली बेपर्दगी और एक आध नमाज़ को छोड़ने तक बात रहती है; लेकिन इन चीज़ों में ज़्यादा लगन मुस्लिम औरतों को बेपर्दा और बेनमाज़ी बनाकर छोड़ता है; इस प्रकार वो औरत अल्लाह तआला की रहमत से दूर होकर लानत की हक़दार हो जाती है।

यहूदी व नसरानी यही चाहते हैं। इसलिये कि वो ख़ुद मलऊन हैं और मुस्लिम औरतों को भी अपनी तरह मलऊन देखना चाहते हैं। ये सही है कि औरत के बनने संवरने का हक़ है, शरीअत इस बात की इजाज़त देती है कि औरत अपने पति के लिये बनाव सिंगार करे लेकिन बात जब इसी शरीअत को छोड़ने तक पहुचें तो यक़ीनन सोचना होगा कि इस हक़ का ग़लत इस्तेमाल हो रहा है और ये बहुत ज़्यादा फ़िक्र की बात है।

राकेट
टीपू सुल्तान की खोज

प्रोफ़ेसर ख़ालिद जावेद

आज बड़े–बड़े देश नयी टेक्नालॉजी की बदौलत दुनिया पर राज कर रहे हैं ये मुसलमान वैज्ञानिकों और उन शासकों की मेहनत है जिन्हें क़ौम के ग़द्दारों ने पराजित किया। इस्लाम दुश्मनों ने मुसलमानों की खोजों को अपने इस्तेमाल में लाकर इसको अपनी उन्नति का साधन बना लिया। बग़दाद के पतन के बाद मैसूर की रियासत से ज्ञान व रक्षात्मक टेक्नालॉजी के भण्डार अपने क़ब्ज़े में लेने के बाद अंग्रेज़ों ने यूरोप व अमरीका को दुनिया पर शासन करने योग्य बना दिया। मैसूर के शेर टीपू सुल्तान के साथ उनके अपने ग़द्दारी न करते तो आज एशिया पूरी दुनिया पर हुकूमत कर रहा होता। टीपू सुल्तान ने अपनी सेना को नये हथियारों और युद्ध प्रणाली से अपराजेय बना दिया था किन्तु ग़द्दारों ने उन्हें बेबस कर दिया। अंग्रेज़ और उसके बाद दूसरी यूरोपीय शक्तियां टीपू की युद्ध प्रणाली रक्षाप्रणाली प्राप्त करने के बाद दूसरी क़ौमों पर अधिपत्य स्थापित करने में सफल हुई थीं। इस ऐतिहासिक वास्तविकता का एक पहलू इस लेख में देखा जा सकता है।

राकेट की आधारभूत शक्ल निर्माण का सेहरा चीन व कोरिया के सर थोपा जाता है। लेकिन ये राकेट केवल चलते हुए तीर से अधिक कुछ न थे। उनके प्रयोग से क्योंकि उस दौर में ख़ेमे और आक्रमणकारियों के कपड़े इत्यादि जल जाते थे इसलिये उनको ख़तरनाक हथियार समझ लिया गया। लेकिन बाहरवी और तेरहवीं सदी में उन तीरों से कहीं अत्याधुनिक अस्ल रॉकेट के अविष्कारक टीपू सुल्तान थे। जिसके कारण अंग्रेज़ भी टीपू सुल्तान को हरा न सके और टीपू सुल्तान को ग़द्दारों ने ख़त्म किया तो ये युद्ध समाप्त हुआ। आज दुनिया के अत्याधुनिक राकेटों और मिज़ाइलों के अस्ल अविष्कारक टीपू सुल्तान ने टेक्नालॉजी का आधार रखा, उसको आगे बढ़ाकर नयी–नयी सेनाएं दुनिया पर राज कर रही हैं।

टीपू सुल्तान और उनके पिता हैदर अली ने उन राकेटो की मदद से अंग्रेज़ फ़ौजों पर हमला किया और बहुत शानदार कामयाबी हासिल की। टीपू सुल्तान ने पूरी युद्ध की प्रणाली बनायी हुई थी जिसको पुस्तक की शक्ल में बनाया गया था। इस किताब का नाम "फ़तेहुल मुजाहिदीन" था। इसके तहत 200 फौजी रॉकेट से लैस होते थे। उन फ़ौजियों को रॉकेट फ़ायर करने का विशेष प्रशिक्षण दिया गया था। क्योंकि ये निशाने को अपने रॉकेट का निशाना बनाने से पहले पूरी खोज और तैयारी करते थे ताकि दिशा और दूरी का अन्दाज़ा ठीक से हो सके। राकेट 8 इन्च लम्बा और 11.5 या 13 इंच गोल या मोटा होता था जिसके साथ लगभग 4 फ़िट लम्बा बांस भी होता था, जिसकी मार एक हज़ार गज़ तक होती थी और इसमें एक पौंड के क़रीब गन पाउडर होता था।

पानीपत के युद्ध (1761ई0) में 2000 से ज़्यादा रॉकेट फ़ायर हुए। दूसरे युद्ध में जो 1780ई0 में लड़ी गयी थी, अंग्रेज़ों को बहुत नुक़सान उठाना पड़ा। एक रॉकेट बारूद के भण्डार पर जाकर गिरा और अंग्रेज़ों को हार का सामना करना पड़ा। 1792ई0 में तीसरा युद्ध लड़ा गया। जिसमें भी रॉकेट बड़े पैमाने पर प्रयोग हुए। मैसूर में जब टीपू सुल्तान से बातचीत के लिये मैबेक क्लब ने अपना दल भेजा तो 500 रॉकेट इस दल के सैल्यूट के लिये दागे गये। 1799ई0 में चौथे युद्ध में भी रॉकेट अत्यधिक संख्यां में प्रयोग किये गये लेकिन अन्दरूनी साज़िशों का शिकार टीपू सुल्तान अपनों के हाथ पराजित हो गये।

युद्ध के ख़ात्मे पर 600 लान्चर, 700 रॉकेट और 9000 ख़ाली खोल मिले जो रॉकेट बनाने के लिये बनाये गये थे। इसी बुनियाद पर 1801 ई0 में रॉकेट के ऊपर खोज का काम बर्तानिया में आरम्भ हुआ। इस खोज के कर्ता–धर्ता विलियम कौन गीरो थे, जिनके अनुसार एक रॉकेट कम से कम पांच लोगों को मारने और ज़ख़्मी करने के योग्य था। इस खोज का सिलसिला जारी रहा और कई अनुभवों के बाद जो रॉकेट सामने आया जो अधिकतर तहक़ीक़ी नवीयत के थे। 1815 ई0 तक रॉकेट की शक्ल और कार्यप्रणाली में बहुत से बदलाव और बेहतरी लायी गयी।

इसकी मार दो किलोमीटर तक होती थी, इसके बाद इसके वारहेड को बढ़ाया गया। 24 पौंड वज़नी रॉकेट को बहुत ख़्याति प्राप्त हुई और उस रॉकेट को बहुत अर्से तक इस्तेमाल किया जाता रहा।

1850 ई0 तक टीपू सुल्तान के बनाये हुए रॉकेटों की नयी शक्ल ही मार्केट का हिस्सा रही लेकिन नयी डिज़ाइन के रॉकेट ने 1870 ई0 में अपनी जगह बनायी। इसका सेहरा विलियम हील के सर जाता है। रॉकेट के प्रचलित रूप ने अंग्रेज़ी सेना को बहुत ज़बरदस्त सफलता दिलायी। नेपोलियन की जंगों में 1806 में रॉकेट इस्तेमाल किये गये जिसने फ्रांस को जलाकर राख कर दिया। 1860 ई0 में कोपेन हेगन (डेनमार्क) पर 300 से अधिक रॉकेट फ़ायर किये गये। इसी प्रकार 1813 ई0 में कई यूरोपीय क्षेत्र बर्तानिया के तिलिस्म में केवल रॉकेट की तबाही के कारण आये। 1812 ई0 में अमरीका और इंग्लैन्ड के युद्ध में वाशिंगटन डीसी पर रॉकेट हमलों के कारण जो बर्बादी हुई वो इंग्लैन्ड की विजय में बदल गयी। 1814ई0 में फ़ोर्ट मैक हेनरी में तबाही आयी। अमरीका के राष्ट्रगान में भी उन राकेटों की तबाही की चर्चा है।

न्यूज़ीलैण्ड की जंगों में भी रॉकेट का बड़े पैमाने पर प्रयोग हुआ और इस जंग में तोपों की महत्ता भी सिद्ध हुई क्योंकि ये बुरी तरह असफल हो गयी थीं। इन युद्धों में प्रयोग किये जाने वाले रॉकेट अभी भी इंग्लैंड के रॉयल आर्लट्री म्यूज़ियम में देखे जा सकते हैं। बल्कि टीपू सुल्तान की फ़ौज से जो रॉकेट मिले थे वो भी इसी म्यूज़ियम का हिस्सा हैं। 1818 ई0 में बर्तानिया ने रॉकेट की पूरी बिग्रेड खड़ी कर दी जो कई जंगों में इस्तेमाल हुई। 1846 ई0 में मैक्सिको पर क़ब्ज़े में भी रॉकेट ने बहुत अहम किरदार अदा किया। पहले विश्वयुद्ध तक रॉकेट की शक्ल में बेहतरी और कामयाबी का दौर जारी रहा। लेकिन पहले विश्वयुद्ध में रॉकेट का नया इस्तेमाल सामने आ गया। फ्रांस ने अपने जहाज़ों पर रॉकेट लगाये जबकि ये अनुभव अधिक सफल न रहा, लेकिन फिर भी ये रॉकेट तबाही का कारण बना। पहले विश्वयुद्ध से पहले और कुछ बाद रॉकेट की हवाई सफलता पर भी बहुत काम हुआ। 1903ई0 में रूसी स्कूलों के गणित के अध्यापक ने रॉकेट के अन्तरिक्ष में जाने का साधन घोषित कर दिया, और उस पर किताब लिखी। इसमें रॉकेट को ताक़त देने और तेज़ रफ़्तार बनाने के अलग–अलग नज़रिये मौजूद थे। 1920 ई0 में रूसियों ने लिक्विड आक्सीजन और लिक्विड हाइड्रोजन के इस्तेमाल का नज़रिया दिया। 1926 ई0 में एक अमरीकी ने लिक्विड फ़्यूल के नज़रिये को आगे बढ़ाया और पहला रॉकेट फ़ायर किया गया। रॉकेट टेक्नालॉजी को हथियार के साथ–साथ अन्तरिक्ष में जाने का साधन भी समझा जाने लगा और इसीलिये इस पर अनुभव और खोज बड़े पैमाने पर आरम्भ हो गयी। आस्ट्रेलिया, इंग्लैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, फ्रांस, इटली, जर्मनी के विशेषज्ञ इसमें सफल रहे। 1927 ई0 और 1931 ई0 में दो लिक्विड फ़्यूल के रॉकेट छोड़े गये। 30 के दशक में इस क्रम में बहुत सफ़लता मिली। उस समय के नये देशों ने उन रॉकेटों की सफलता के लिये साधन का भरपूर प्रयोग किया। जर्मनी इस क्रम में बहुत सफल रहा और वी।। रॉकेट की तैयारी ने उसे डोरमार आर्टलरी और दूर मार मिज़ाइल से भी परिचित कराया। जिससे दूसरे विश्वयुद्ध के आख़िरी दिनो में बर्तानिया को बमबारी से तबाह करके रख दिया था।

दूसरे विश्वयुद्ध में हथियारों के अत्यधिक प्रयोग और टेक्नालॉजी के तेज़ होते आधारों ने जिस तरह दूसरे कई हथियारों को नयी दिशा और दशा दी इसमें रॉकेट भी शामिल है। रूस और जर्मनी ने दूसरे विश्वयुद्ध में रॉकेट को बहुत ज़्यादा इस्तेमाल किया जबकि इंग्लैण्ड और अमरीका ने इसका उतना प्रयोग नहीं किया। हालांकि इंग्लैण्ड ने इस हथियार से बहुत सफलता प्राप्त की थी। जंग के आख़िरी हिस्से में जर्मन टैंकों पर अमरीका और इंग्लैण्ड ने रॉकेट लगाये। रॉकेट आर्टलरी की जगह न ले सके लेकिन रॉकेट को एक नये तरह के हथियार के तौर पर ख़ूब सफलता मिली। तोप ख़ाने का महत्व समाप्त न होने और रॉकेट के बड़े पैमाने पर बढ़ते प्रयोग के मिले जुले कारण हैं। यानि दोनों किसी न किसी सूरत में प्रशंसा के पात्र हैं। जैसेः

1– तोपख़ाना तेज़ी से अपनी पोज़ीशन बदल नहीं सकता जबकि रॉकेट लान्चर में पोज़ीशन का फ़ौरन बदलाव संभव है। जबकि खुदकार तोपख़ाने में ये योग्यता होती है लेकिन मल्टी बैरल रॉकेट लान्चर जिस प्रकार कुछ ही क्षणों में अपनी पोज़ीशन बदल लेता है वैसे तोपख़ाना में संभव नहीं।

2– तोपख़ाने में एक विशेष दिशा में निशाना लगाने की अधिक योग्यता है। और लगातार एक ओर एक ख़ास निशाने को टारगेट किया जा सकता है। रॉकेट लान्चर से फ़ायर होने वाले रॉकेट तबाही और ख़ौफ़ को जल्द

मुसल्लत करने में ज़्यादा असरदार हैं।

3– रॉकेट आर्टलरी के संदर्भ में सही निशाना बहुत मुश्किल होता है। जबकि तोपख़ाना इस सिलसिले में कामयाबी से काम कर सकता है।

4– रॉकेट सिस्टम तोपख़ाने के मुक़ाबले में ज़्यादा मंहगे होते हैं। और रॉकेट के मुक़ाबले में ज़्यादा बारूद फेंक सकते हैं।

5– रॉकेट सिस्टम साइज़ में छोटा यानि स्मार्ट सिस्टम होता है जिससे उसकी योग्यता भी फुर्तीली हो जाती है जबकि तोप का साइज़ और उसका तामझाम उसे उससे रोकते हैं।

6– तोपख़ाने की बमबारी बहुत हद तक बेहतर बाहदफ़ होती है जिसके कारण अगर दुश्मन की फ़ौज और दोस्तों की फ़ौज क़रीब भी हों तो तोपख़ाना अपना काम जारी रख सकता है। जबकि रॉकेट आर्टलरी में ये संभव नहीं।

ज़मीनी फ़ौज के लिये रॉकेट की कामयाबी ने हवा और पानी में भी उसके लिये रास्ते खोल दिये है। जहाज़ों पर रॉकेट की तैनाती पहले विश्व युद्ध में हुई। लेकिन ये अनुभव बहुत सफल न रहा जबकि उससे दुश्मन फ़ौज के कुछ निशाने तबाह हुए लेकिन जहाज़ों पर उन रॉकेटों को लगाना मुश्किल काम था क्योंकि उनको लगाने के दौरान कई जहाज़ भी नष्ट हो गये। दूसरे विश्वयुद्ध तक इस टेक्नालॉजी ने बहुत उन्नति कर ली और जहाज़ों पर उनका लगना हुआ। ये रॉकेट हवा से हवा और ज़मीन में दोनों के लिये कामयाबी से मुख़ातिब हुए। रॉकेट का इस्तेमाल जहाज़ों मे तो सफल हो गया लेकिन समन्दरों में सफल होने में कुछ समय लगा।

रॉकेट सिस्टम की नयी खोज यानि मिज़ाइल टेक्नालॉजी के आने से रॉकेट की तैयारी में क़दरे इन्हसार की हद तक कमी आयी। दुनिया की ज़्यादातर फ़ौजो ने मिज़ाइल टेक्नालॉजी को बढ़ावा देना शुरू कर दिया गया। रॉकेट और मिज़ाइल का बुनियादी नज़रिया जबकि एक ही है लेकिन मिज़ाइल मुकम्मल तौर पर ठीक–ठीक निशाना लेने के लिये बनाया गया है। और इसका सिस्टम अलग–अलग तरह की गाइडेन्स सिस्टम के तहत चलता है। और मख़ूसस निशाने को लेता है जबकि रॉकेट मख़ूसस निशाने के लिये नहीं होते बल्कि उनको फ़ायर करके तेज़ी से अलग–अलग इलाक़ों को भयभीत करना अस्ल मक़सद होता है।

नये दौर में राकेट जहाज़ों, हेलीकाप्टरों, जंगी बेड़ों, ट्रकों और ट्रैक व्हीकल सभी पर लगाये तो हैं। और इसके वारहेड रवायती सतह से निकल कर रसायनिक, जैविक और एटमी हथियारों से भी ले चुके हैं। अमरीका ओर यूरोप के अलावा मिज़ाइल टेक्नालॉजी और रॉकेट में फ़र्क़ सिर्फ़ गाइडेन्स सिसटम तक ही रह गया है और नयी फ़ौजों में राकेट की खेप आम नज़र आती है। यहां ये बात भी ज़िक्र करने के लायक़ है कि अमरीका और यूरोपीय देशों को मल्टी बैरेल रॉकेट लान्चर से ख़ौफ़ भी आता है। क्योंकि ये सिस्टम कम ख़र्चीला होने के साथ–साथ कई जेहादी और गोरिल्ला संस्थाओं की पसंदीदा व्यवस्था भी बन चुका है। अफ़ग़ान जंग में छोटे–छोटे मल्टी बैरेल रॉकेट सिस्टम ने बहुत काम किया था, जो आसानी से खींच कर ले जाये जा सकते थे।

शेष : पर्दे के आड़ में बेपर्दगी

..... कि वहां के किसी भी बावक़ार मोतबर कुर्सी पर बैठे शख़्स के नसब का यक़ीन से पता लगाना मुश्किल काम बना हुआ है। इसके विपरीत मुस्लिम समाज इस्लामी शिक्षा व शरई पर्दे के मज़बूत हिसार के कारण औरतों की आज़ादी व बेपर्दगी के तेज़ तूफ़ान के बावजूद अब तक भी बहुत तक सुरक्षित है। हां अब उनकी नौजवान नस्लों ख़ासकर लड़कियों में बेपर्दगी व जिस्म को नंगा करने के बढ़ते हुए शौक़ से इसका भविष्य सांस्कृतिक बिगाड़ के आख़िरी मोड़ पर आ पहुंचा है। अगर मुसलमान अपनी लड़कियों व औरतों में बढ़ती हुई बेक़ैद आज़ादी व बेपर्दगी के फ़ित्नों को मामूली सोचा और उसकी तरफ़ से उनमें फैली हुई ग़फ़लत के वो शिकार रहे, तो उनका आयली उसूल व दस्तूर, हसब व नसब, ख़ून व शराफ़त, सभ्यता व संस्कृति की तबाही यक़ीनी है। इसलिये अगर वो अपनी नस्लों को सही नस्ल व उच्च व्यवहारिकता का पैकर देखना चाहते हैं, जिस पर उम्मते मुस्लिमा की उन्नति का आधार है, तो हर घर का ज़िम्मेदार अभिभावक मुस्लिम लड़कियों व औरतों को पर्दे के फ़ायदे की जानकारी दें। इस्लामी समाज की उन्नति व मुस्लिम औरतों का सही दीनी प्रशिक्षण, तख़लीक़ व तहज़ीब और उनके पर्दे व हिजाब में छिपा है। क्योंकि जब औरत किसी भी प्रकार से बेपर्दा हो जाती है तो उनकी नस्ल व समाज की हलाकत ऐतिहासिक क़ुदरती अटल क़ानून है।

एरियल शेरोन और फ़िलिस्तीनियों का क़त्ल-ए-आम

जनाब अहमद मूर

कई पहलुओं से इस्राईल के पूर्व प्रधानमंत्री एरियल शेरोल को एक सम्पूर्ण सहूयनी दृष्टिकोण वाला व्यक्ति घोषित किया जा सकता है। फ़िलिस्तीन में यहूदियों के अधिकारों यानि "सहयूनियत" के लिये वो व्यक्ति अनथक प्रयास करता था। ये भी कहा जा सकता है कि एरियल शेरोन के बाद जितने भी इस्राईली नेता आये कोई भी सहयूनियत में उससे आगे न बढ़ सका। सहयूनी समाज और हालात पर जो नज़र उसकी थी और उसकी बुनियाद पर उसने ऐसी राजनीति को हवा दी जो भौतिकता पर आधारित होने के साथ–साथ अय्यारी व मक्कारी पर आधारित थी। फ़िलिस्तीनी और लेबनानी शहरों के ख़िलाफ़ शेरोन के द्वारा चलाये जाने वाले आन्दोलन और उन निहत्थों पर ढ़ाया जाने वाला जुल्म ही वर्तमान इस्राईल की बुनियाद हैं और यही वो इस्राईल है जिसका ख़्वाब एरियल शेरोन ने देखा था और इसी राज्य की उसे तमन्ना थी। फ़िलिस्तीनी जनता और मानवाधिकार के ध्वजवाहक, शेरोन की बर्बरता पर आधारित कार्यप्रणाली को उसकी अस्ल विरासत घोषित करते हैं। एरियल शेरोन ने केवल सहयूनी उद्देश्यों की पूर्ति हेतु ही प्रयास नहीं किये बल्कि फ़िलिस्तीनी धरती पर अवैध निर्माण में भी उस व्यक्ति का सहयोग रहा है और आज इस्राईल अपने इसी प्रोग्राम की मदद से फ़िलिस्तीनी धरती पर अधिक से अधिक यहूदियों को बसाने और फ़िलिस्तीनियों के अधिकार हनन करने में सफल हुआ है।

एरियल शाइज़मैन (शेरोन) का जन्म सन् 1928ई0 में फ़िलिस्तीन में हुआ जिस पर उस समय इंग्लैण्ड का क़ब्ज़ा था। उसके माता–पिता यहूदी थे जिन्हें बेलारूस से फ़िलिस्तीन विस्थापित किया गया था। उस समय यूरोप के यहूदी बड़ी संख्यां में फ़िलिस्तीन विस्थापित हो रहे थे जिसे इस्राईल के एक संगठन मापाई का समर्थन प्राप्त था। ये बात साफ़ नहीं कि शाइज़मैन ने कब अपना नाम बदल कर शेरोन रख लिया। बहरहाल उसने अपना नाम बदल लिया था। अस्ल में इस्राईलीयों और यहूदियों की ये आदत थी कि जब वो यूरोप के यहूदियों का साथ छोड़ते थे तो उसके साथ ही वो उसके सभी संगठनों से संबंध भी तोड़ देते थे। यानि स्वयं को पूरी तरह से इस्राईली रंग में रंग लेते थे। 14/साल की उम्र में शेरोन ने एक पैरामिलिट्री यूथ ग्रुप की सदस्यता ली थी। इसके बाद वो इस्राईल के अर्द्ध सैनिक बल के दस्ते "हगाना" में स्थायी रूप से शामिल हो गया। इस संगठन यानि "हगाना" ने आगे चलकर इस्राईली सेना का निर्माण किया। एरियल शेरोन की बेरहमी का अन्दाज़ा उसकी इस ख़्वाहिश से लगाया जा सकता है जिसे वह खुलकर प्रकट करता था कि फ़िलिस्तीनी नागरिकों पर हमले उसकी अगुवाई में ही किये जायें।

1953ई0 में उसने ज़माने भर में बदनाम इस्राईल की यूनिट 101 का नेतृत्व करते हुए कुबई में क़त्ले आम किया जिसमें 59 फ़िलिस्तीनी नागरिक शहीद हो गये थे। इस्राईली फ़ौजी यूनिट ने एरियल शेरोन के नेतृत्व में चरम सीमा की बर्बरता और बेरहमी से कार्यवाही करते हुए बहुत बड़ी संख्यां में औरतों और बच्चों को भी क़त्ल किया था। उसके दशकों बाद लेबनान की राजधानी बेरूत में सबरा और शातीला के शरणार्थी कैम्पों में होने वाले क़त्लेआम का ज़िम्मेदार भी एरियल शेरोन ही था।

1982ई0 में लेबनान पर इस्राईली हमले का उद्देश्य यही था कि फ़िलिस्तीनी लिबरेशन आर्गनाइज़ेशन (PLO) के गोरिल्ला लड़ाकुओं को लेबनान व इस्राईल की सीमा से दूर रखा जाये। एरियल शेरोन की अगुवाई में ज़िद्दी इस्राईली फ़ौजियों ने बेरूत का घेराव कर लिया और निदोर्ष नागरिकों पर बमबारी की जबकि अन्तराष्ट्रीय शक्तियों ने उससे बातचीत करते हुए ये हिदायत दी थी कि इस तबाही को तुरन्त रोक दिया जाये। इस्राईली सेना पीछे हटने पर राज़ी तो हुई लेकिन इस शर्त के साथ कि यासिर अरफ़ात को देश से निकाल दिया जाये और त्यूनेशिया भेज दिया जाये। इस शर्त के बाद अरफ़ात और उनके सिपाही सबरा और शातीला के कैम्प छोड़ने पर मजबूर हो गये थे। ये कैम्प बेरूत के मुज़ाफ़ात में स्थित थे और घनी बस्ती आबाद थी। फ़िलिस्तीनियों सिपाहियों के जाने के बाद कैम्पों में शरणार्थी बिना सर व सामान के होकर रह गये और उनके लिये अपने बचाव का कोई

रास्ता नहीं रह गया। फ़िलिस्तीनी सेना के कैम्प छोड़ने के बाद एरियल शेरोन ने लेबनानी मलेशिया फ़लांगे को कैम्प में प्रवेश करने की आज्ञा दी और वहां उसने दो दिनों तक क़त्ले आम किया। इस घटना में तीन हज़ार फ़िलिस्तीनी और लेबनानी मारे गये थे। स्वतन्त्र अख़बार से जुड़े पत्रकार राबर्ट फ़स्क उन कुछ लोगों में से थे जिन्होने ख़ाली करने के बाद उन कैम्पों का दौरा किया था। अपनी किताब "पिटी दि नेशन" में एरियल शेरोन के अत्याचारों को कुछ इस तरह बयान किया है:

"सितम्बर 1982ई0 की सुबह 10 बजे फ़िलिस्तीनियों के कैम्प में हमें जो कुछ नज़र आया उसे केवल न बताने योग्य नहीं कहा जा सकता है.....इन सैंकड़ों निहत्थों लोगों को गोलियों से भून दिया गया.....ये एक क़त्लेआम था, जिसे हादसे का नाम दिया गया है। यहां लेबनान में हम कितनी आसानी से हादसे का प्रयोग कर रहे हैं ये तो अत्याचार है बल्कि अत्याचार भी अपनी सभी सीमाओं को पार कर गया है। अगर इस्राईलियों के साथ हुआ होता तो उसे आतंकवादी घटना का नाम देते। ये एक जंगी जुर्म था....."

केवल फ़िलिस्तीनी ही नहीं थे जो अत्याचारी कार्यवाहियों का निशाना बने। बैरूत में मार्च करते हुए लेबनान पर एरियल शेरोन ने जो हमला करवाया था उसी हमले ने हिज़बुल्लाह की स्थापना की राह हमवार की। इसके अलावा दक्षिणी लेबनान पर बीस साल के इस्राईली क़ब्ज़े से भी हिज़बुल्ला और उसके आन्दोलन को ताक़त मिली। इसके बाद हिज़्बुल्लाह के योद्धाओं ने इस्राईली फ़ौजियों पर हमले करने शुरू किये जिसके परिणाम में 2000ई0 के दौरान लेबनान के एक बड़े हिस्से से इस्राईली सेनाओ की पराजय सम्भव हो सकी। पहले पहल तो यहूदी इस्राईलियों ने एरियल शेरोन की बर्बरता और जंग में लिप्त होने की काट की लेकिन बाद में जब थोड़ी ग़ैरत जागी तो एक सरकारी पैनल ने सबरा और शातीला क़त्लेआम में इसके किरदार की खोज करने के बाद पर रक्षा मंत्री के पद से हटाने का दबाव डाला लेकिन फिर भी 2001ई0 में उन्हीं यहूदियों ने उसे अपना प्रधानमंत्री चुन लिया। शेरोन की अध्यक्षता में ही इस्राईली सेना 2000ई0 में मस्जिदे अक़्सा के प्राणंग में प्रविष्ट हुई थी जिसके बाद फ़िलिस्तीनी जांबाज़ों ने इन्तिफ़ाज़ा आन्दोलन का आरम्भ किया गया था। शेरोन के फ़िलिस्तीन विरोधी कार्यों की दास्तान यहीं ख़त्म नहीं हुई बल्कि गाज़ा पट्टी, पश्चिमी किनारे और गोलान की पहाड़ियों के चारों ओर आज यहूदी बस्तियों के अवैध निर्माण जारी हैं। एरियल शेरोन को जब इस बात का अन्दाज़ा हो गया था कि फ़िलिस्तीन और इस्राईल के बीच "अमन अमल" पर पेश रफ़्त हो सकती है तो उसने आज़ाद फ़िलिस्तीन का पुरज़ोर विरोध करते हुए इस्राईली नव आबादी को वृहद करने के इरादों पर विचार किया। यहूदी बस्तियों के निर्माण पर इस्राईल की सभी राजनीतिक पार्टियां सहमत थीं लेकिन 2005ई0 में जब एरियल शेरोन ने ग़ाज़ा पट्टी से 8 हज़ार यहूदी बस्तियों के ख़ाली करने का फ़ैसला किया तो कुछ राजनीतिक पार्टियों ने इसका विरोध किया लेकिन उन्हें इस बात की समझ नहीं थी कि एरियल शेरोन के इस क़दम में क्या मक्कारी छिपी है। इस फ़ैसले का मक़सद ये ज़ाहिर करना था कि इस्राईल फ़िलिस्तीनी शरणार्थियों का ज़िम्मेदार नहीं है और ये कि गाज़ा पट्टी पर इस्राईल ने क़ब्ज़ा नहीं किया है। इस क़ब्ज़े के पीछे एक और फ़ैसला किया गया था कि जो पश्चिमी किनारे पर एक हिफ़ाज़ती दीवार बनाने से संबंधित था। आज भी ये दीवार शेरोन की ज़ालिमाना विरासत और फ़िलिस्तीनी इलाक़ों पर इस्राईली तिलिस्म की पहचान के तौर पर खड़ी है। आज यहूदी हुकूमत यहूदी बस्तियों के निर्माण रोकने पर आमादा नही है। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उनके कार्यों की निंदा व विरोध किया जा रहा है। इस्राईल अगर इन कार्यों से बाज़ नहीं आया तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर और भी ज़्यादा अलग–थलग पड़ जायेगा और दूसरी ओर बराबरी के अधिकार के लिये फ़िलिस्तीनियों की कोशिशों को लगातार ताक़त मिलेगी और जहां तक शेरोन के जाबिराना मक़सदों की बात है, वो तो कभी पूरे नहीं हो सकेंगे। फ़िलिस्तीनियों पर सहयूनी वर्चस्व क़ायम नहीं रह सकती। सहयून परस्त शेरोन जिन कोशिशों को शुरू किया था फ़िलिस्तीनियों की जमहूरियत और आज़ादी की राह में अब ज़्यादा दिनों तक रूकावट नहीं बन सकते।

पति के अधिकार

अबू उमर मज़ाहिरी

पति–पत्नी का संबंध बहुत गहरा होता है। ये जोड़ केवल एक मर्द और एक औरत का नहीं बल्कि ये एक ख़ानदान का दूसरे ख़ानदान से, एक क़बीले का दूसरे क़बीले से जोड़ है। जब पति पत्नी आपस में मिलेंगे तो पति के रिश्तेदार पत्नी के रिश्तेदारों और पत्नी के रिश्तेदार पति के रिश्तेदारों से मिलेंगे। मुहब्बतें पैदा होंगी। फिर एक दूसरे पर हक़ बनेगा और एक दूसरे का ध्यान रखा जायेगा। दामाद के रिश्ते का ध्यान तो पुश्तों से रखा जाता है। बहरहाल ये एक मज़बूत संबंध है और एक दूसरे के साथ पूरी ज़िन्दगी गुज़ारनी है इसलिये शरीअत ने दोनों के अधिकार और कर्तव्य बतायें हैं। अगर उन कर्तव्यों का निर्वाह किया जायेगा जीवन खुशहाल होगा।

बीवी की ज़िम्मेदारी और पति के उस पर अधिकार

सबसे पहले औरत की ज़िम्मेदारी अल्लाह की इबादत और उसके आदेशानुसार जीवन यापन करना है। पांच वक़्त की नमाज़ की पाबन्दी, ज़िक्र व कुरआन की तिलावत की पाबन्दी, सारे काम सुन्नत के अनुसार करना, बच्चों के प्रशिक्षण की चिन्ता करना। पति की आज्ञा मानना। अल्लाह तआला के हक़ के बाद सबसे बड़ा हक़ औरत पर पति का है। इसीलिये हज़रत आयशा रज़ि0 रिवायत करती हैं कि मैंने रसूलुल्लाह स0अ0 से पूछा कि औरत के ऊपर सबसे बड़ा हक़ किसका है? आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया, उसके पति का। और मर्द पर सबसे ज़्यादा हक़ किसका है? फ़रमायाः उसकी माँ का। (हाकिमः 3 – 35)

हज़रत अबूहुरैरा रज़ि से रिवायत है कि एक औरत हुज़ूर स0अ0 की ख़िदमत में हाज़िर हुई और पूछा कि औरत पर उसके पति का क्या हक़ है? आप स0अ0 ने फ़रमायाः अगर पति के दोनों जबड़े से ख़ून और पीप बह रहा हो और बीवी अपनी ज़बान से उसे चाट ले फिर भी उसने अपने पति का पूरा हक़ नहीं अदा किया। और इरशाद फ़रमायाः अगर किसी इन्सान के लिये सजदा मुनासिब होता तो मैं औरत को हुक्म देता कि वो अपने पति को सजदा करे जब वो उसके पास आये। (हाकिम)

ईमान की मज़ा पति की आज्ञापालन में है

हज़रत माज़ रज़ि0 से रिवायत है कि हुज़ूर स0अ0 फ़रमाते हैंः कोई औरत ईमान की मिठास नहीं पा सकती जब तक कि अपने पति के हक़ को अदा न कर दे।

हज़रत आयशा रज़ि0 से रिवायत है वो फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः अगर कोई मर्द अपनी बीवी को हुक्म दे लाल पहाड़ को काले पहाड़ की ओर करने का और काले पहाड़ को लाल पहाड़ की ओर तो औरत के लिये बेहतर यही है कि वो उसे कर दे। (इब्ने माजा)

इन सभी रिवायतों से मालूम होता है कि औरत के लिये पति की आज्ञा मानना कितना ज़रूरी है। पति की आज्ञापालन का अर्थ ये है कि पत्नी स्वयं को उसके अधीन कर दे। उसके किसी आदेश का अवज्ञा न करे। जिस समय जिस हाल में उसकी ओर आदेश हो उसको पूरा करे। अलबत्ता अल्लाह तआला की नाफ़रमानी में पति का आज्ञा पालन नहीं किया जायेगा। इसलिये कि अल्लाह का हक़ पति से ज़्यादा है। पति का आदर करना। नाम लेकर न बुलाना। लान–तान न करना। उसकी हर ज़रूरत का ध्यान रखना। उसकी हर मंशा का भी ध्यान रखना। पति से बेपनाह मुहब्बत का इज़हार करना। उसके घर से बग़ैर उसकी इजाज़त के न निकले। पति की मौजूदगी में बग़ैर उसकी आज्ञा के नफ़िल रोज़ा भी न रखे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि0 से हुज़ूर स0अ0 ने फ़रमाया कि पति के अधिकारों में से एक अधिकार ये भी है कि बीवी पति से बिना आज्ञा लिये नफ़िल रोज़ा न रखे और अगर रख लिया तो सिवाये भूखे और प्यासे रहने के कुछ न मिलेगा और औरत को चाहिये कि वो अपने घर से बग़ैर अपने पति की आज्ञा के न निकले और अगर ऐसा किया तो उस पर फ़रिश्ते,

रहमत के फ़रिश्ते, अज़ाब के फ़रिश्ते लानत भेजते हैं, जब तक घर न वापस आ जाये। (तिबरानी)

औरत के लिये उसका घर सबसे सुरक्षित जगह है। अव्वल तो घर से निकलना औरत के लिये नापसंदीदा है। अगर बहुत ज़रूरत है तो पूरे एहतियात के साथ पति से आज्ञा लेकर निकल सकती है। आजकल हमारी बहनों की ज़हनी आज़ादी की वजह से इस पर अमल बिल्कुल छूट गया है। (अगर बेचारा पति कभी पूछ ले कि कहां जा रही हो तो उसी वक़्त क़यामत हो जायेगी। दसियों अच्छे–अच्छे जवाब सुनने को मिल जायेंगे) क्या हम ऐसे ही जाते हैं? क्या आप हमें ग़लत समझते हैं? सारे काम कर रहे हैं इसीलिये ऐसा पूछ रहे हो? हालांकि हदीस में आता है कि औरत जब घर से बाहर निकलती है तो शैतान उसे घूरता है और लोगों की ध्यान उसकी ओर आकर्षित करता है।

पति के माल की सुरक्षा

जो कुछ पति कमाकर देता है उसका ग़लत इस्तेमाल न करे। फ़िज़ूल ख़र्ची न करे। बग़ैर उसकी इजाज़त के किसी को न दे। हां मामूली खाने–पीने की चीज़ें पड़ोस इत्यादि में दे सकती है। लेकिन बेतुका ख़र्च ख़ासकर पति की हैसियत से बढ़कर ख़र्च न करे बल्कि उसमें भी बचाकर रखे ताकि बुरे वक़्त पर काम आये। अगर बेजा ख़र्च किया तो क़यामत के दिन उसका जवाब और हिसाब देना होगा।

अपनी नफ़्स की सुरक्षा

ये भी बीवी की ज़िम्मेदारी है। हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० ने फ़रमाया कि जब औरत ने पांच वक़्त की नमाज़ पढ़ी, रमज़ान के रोज़े रखे और अपनी शर्मगाह की हिफ़ाज़त की और अपने पति की आज्ञा का पालन किया तो उससे कहा जायेगा कि जन्नत के जिस दरवाज़े से चाहे दाख़िल हो जाये। (मुसनद अहमद)

औरत के लिये ज़रा सी भी गुंजाइश नहीं है कि वो अपनी निगाह किसी पर दौड़ाये सिवाये अपने पति के। चारित्रिक बुराइयों से अपने आप को बचाये। यही औरत की ख़ूबसूरती है। क़ुरआन करीम में ऐसी औरत की तारीफ़ की गयी है। ये औरत नेक हैं, जो फ़रमाबरदार है और पति की ग़ैर मौजूदगी में अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण करने वालियां हैं।

बर्मा के मुसलमानों की ज़िम्मेदारी

"अगर तुमने इसमें ग़फ़लत की तो याद रखो मेरे भाइयों! मैं शायद इस वक़्त हूं तुम्हें याद दिलाने वाला और शायद रिकार्ड मौजूद हो या न हो लेकिन जो तुममें से ग़ौर से सुनेगा वो मेरी बातें याद करेगा। मैं कोई साहबे फ़रासत आदमी नहीं हूं। मैं कोई रोशन ज़मीर वाला आदमी नहीं हूं जिनको मसलन दस साल पहले अल्लाह की तरफ़ से कोई बात दिखाई जाती हो, लेकिन ये बात उतनी ही मोटी है उतनी ही खुली हुई है जैसे कोई बारिश देखे, कड़क सुने, ठन्डी हवा चले और वो कहे कि बारिश होने वाली है और पानी बरसने वाला है और पानी बरस जाये तो उसको कोई वली नहीं मानता, ये तो बच्चा भी समझ सकता है कि बारिश होने वाली है। इस तरीक़े से मैं आपसे कहता हूं कि बहुत सख़्त दिन आने वाले हैं, ख़ुदा के लिये इस वक़्त अपने कारोबार को इतनी अहमियत न दो, जितनी अहमियत देते रहे हो। इस वक़्त दीन के लिये कुछ कर लो, सूर फूंक दो ईमान का, तौहीद का, रिसालत का, एक बार बर्मा के एक किनारे से दूसरे किनारे तक इस्लामी सभ्यता, दीनदारी और तौहीद का सूर फूंक दो, एक एक मुसलमान को अच्छी तरह बाख़बर कर दो, एक एक का हाथ पकड़ कर कहो कि ये दीन है और ये ईमान है, ये कुफ़्र है ये शिर्क है, शिर्क की नफ़रत मुसलमानों और उनके बच्चों के दिलों में बिठा दो, बच्चों की तालीम का इन्तिज़ाम कराओ और गांव में ऐसे गांव में कि जिसका नाम भी कभी न सुना हो, उसके एक किनारे पर झोपड़ा पड़ा है किसी बर्मी मुसलमान का तो जाकर उसके क़दम पकड़ लो और उससे कहो कि अल्लाह के बन्दे, तू मुसलमान है, मुसलमान ज़िन्दा रह और मुसलमान मर, इसको ऐसा कर दो कि ईमान से इनकार का ये सोच भी न सके जैसे कि वो लौह है जो किले में सुरक्षित रखा जाये। इस प्रकार इसको सुरक्षित कर दो। इस काम की फ़ुरसत है।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी रह० (तोहफ़ा–ए–बर्मा)

ईसाल-ए-सवाब

की शरई हैसियत

मुहम्मद अहसन अब्दुल हक़ नदवी

दुनिया से जाने के बाद और क़यामत होने से पहले का समय "बरज़ख़" कहलाता है। इसके बीच के समय में इन्सान की रूह अपनी ख़ास जगह पहुंचा दी जाती है और जिस्म क़ब्र की मिट्टी से मिल जाता है। लेकिन अल्लाह अपनी क़ुदरत के ज़रिये जिस्म के बिखरे हुए हिस्सों और रूह के बीच संबंध स्थापित रखता है। इसी संबंध के कारण से शरीर के बिखरे हुए अंगों में एहसास की कैफ़ियत बाक़ी रहती है और सम्पूर्ण न्याय क़यामत के बाद उस समय शुरू होता है जब वह जन्नत व दोज़ख़ में डाल दिया जाता है। लेकिन उसकी परिदृष्य क़ब्र और बरज़ख़ की ज़िन्दगी ही से आरम्भ हो जाती है और यहीं से जन्नत की नेमतों से आनन्दित होने का मौक़ा भी दिया जाता है और दोज़ख़ की परेशानियों को भी झेलना पड़ता है। ये वो ज़माना होता है जब दुनिया से उसका रिश्ता कट चुका होता है। अब सवाल ये है कि क्या किसी और शख़्स का अमल उसकी ज़िन्दगी में काम आ सकता है या नहीं? इसलिये कि अल्लाह तआला का इरशाद है: "कि इन्सान को सिर्फ़ अपनी सई और अपना अमल काम आयेगा, दूसरे का नहीं।"

ईसाले सवाब के मसले में भी उम्मत कमी व अधिकता का शिकार है। एक वर्ग ईसाले सवाब के मसले में अधिकता का शिकार होकर बहुत आगे निकल चुका है कि वो इसी की उम्मीद में नमाज़, रोज़े जैसे फ़र्ज़ से ग़ाफ़िल हो गया है। वो समझता है कि मौत के बाद फ़ातिहा कराने ही से उसकी बख़्शिश पक्की है। लिहाज़ा नऊज़ बिल्लाह शरीअत के हुक्मों को पूरा करने की भी कोई ख़ास ज़रूरत नहीं है। फिर इस जमाअत ने तीजा, चालिसवां, छमाही, सालाना इत्यादि के नाम से बहुत सारी बिदअत चला रखी हैं और ईसाले सवाब को स्वयं से गढ़ लिया है। इसकी नियम व शर्तें बना ली हैं, जैसे शीरीनी या खाना सामने हो, लोबान या अगरबत्ती सुलगायी जाये, ख़ास आयतें व दुआंए पढ़ी जायें, ज़ाहिर है कि शरीअत में इन शर्तों व नियमों का वजूद भी नहीं मिलता।

ईसाले सवाब का मतलब तो सिर्फ़ ये है कि मरने वाले के लिये दुआ की जाये, इस्तिग़फ़ार किया जाये और अगर हो सके तो सदक़ा या ख़ैरात करके या कुछ तिलावत वग़ैरह करके अल्लाह से दुआ की जाये कि इसका सवाब फ़लां को पहुंच जाये। दुआ भी न की सिर्फ़ दिल में नियत रखकर सदक़ा किया या तिलावत की तब भी इंशाअल्लाह सवाब पहुंच जायेगा इसलिये कि अल्लाह तआला दिलों के राज़ों को भी जानता है।

दूसरी ओर कमी ये है कि एक जमाअत सिरे से ईसाले सवाब को मानती ही नहीं है। हालांकि ये भी ग़लत नज़रिया है। क़ुरआन व हदीस से मरने वाले के लिये दुआए इस्तिग़फ़ार करना साबित है, इससे कोई भी इनकार नहीं कर सकता और ईसाले सवाब भी एक दुआ ही है फिर ये कैसे कह दिया जाता है कि सवाब नहीं पहुंचता है।

ईसाले सवाब के सुबूत की दलील

"और यूं दुआ करते रहना कि मेरे परवरदिगार! उन दोनों पर रहमत फ़रमाइये जैसा कि उन्होंने मुझको बचपन में पाला और परवरिश किया।" (बनी इस्राईल: 24)

आयत में मां-बाप के हक़ में दुआ करने का हुक्म दिया गया है, मालूम हुआ कि दुआ करने से उनको फ़ायदा पहुंचता है, वरना दुआ करने को न कहा जाता और ईसाले सवाब करना भी एक दुआ है।

"ऐ हमारे परवरदिगार! हमको बख़्श दे और हमारे उन भाइयों को भी जो हमसे पहले ईमान ला चुके हैं।" (सूरह हश्र: 10) आयत में मरने वालों के लिये बिलाशुब्हा दुआ है और ईसाले सवाब दुआ के बग़ैर कुछ नहीं है।

1- आप स0अ0 ने एक मेंढ़ा लाने का हुक्म दिया ताकि आप उसकी क़ुर्बानी करें, फिर आप स0अ0 ने फ़रमाया: "या अल्लाह! मुहम्मद और मुहम्मद की औलाद और मुहम्मद की उम्मत की तरफ़ से क़ुबूल फ़रमा लीजिये, फिर आप स0अ0 ने क़ुर्बानी की।" (मुस्लिम: 5091) इस हदीस से साफ़ तौर पर ईसाले सवाब का जायज़ होना

मालूम होता है, इसलिये कि कुर्बानी एक नेक काम है, जिसका सवाब दूसरों को पहुंचाने की दुआ की गयी। ईसाले सवाब इसी को कहते हैं।

2– आप स0अ0 ने फ़रमायाः "जब इन्सान मर जाता है तो उसका अमल ख़त्म हो जाता है, सिवाये तीन चीज़ों के, सदक़ा–ए–जारिया, ऐसा इल्म जिससे फ़ायदा उठाया जाये, ऐसी नेक औलाद जो उसके लिये दुआ करती रहे।" (मुस्लिमः 4223)

3– "आप स0अ0 जब मरने वाले को दफ़न करने से फ़ारिग़ हो जाते तो उस पर रुक जाते और फ़रमातेः अपने भाई के लिये इस्तिग़फ़ार करो, और उसके लिये साबित क़दमी की दुआ करो, इसलिये कि इस वक़्त उससे सवाल हो रहा है।" (अबूदाऊदः 3221)

4– एक शख़्स ने कहाः ऐ अल्लाह के रसूलः मेरी मां की वफ़ात हो गयी है, तो अगर मैं उनकी तरफ़ से सदक़ा करूं तो उनको फ़ायदा पहुंचेगा? आप स0अ0 ने फ़रमायाः हाँ! उसने कहाः मेरा एक बाग़ है, मैं आपको गवाह बनाता हूं कि मैंने उसे मां की तरफ़ से सदक़ा कर दिया। (तिरमिज़ीः 669)

5– एक शख़्स आपके पास आया, और उसने कहाः ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी मां का अचानक इन्तिक़ाल हो गया है, और उन्होंने वसीयत नहीं की, मेरा ख़्याल है कि अगर वो बात करतीं तो सदक़ा करतीं, तो अगर मैं उनकी तरफ़ से सदक़ा करूं तो क्या उनको सवाब मिलेगा?आप स0अ0 ने फ़रमाया, हां। (मुस्लिमः 2326)

इन दलीलों में जहां दुआ व इस्तिग़फ़ार का ज़िक्र है, उनसे मालूम होता है कि बदन की इबादतें फ़ायदेमन्द हैं और जहां सदक़े का ज़िक्र उससे मालूम होता है कि माली इबादतें भी फ़ायदेमन्द हैं और दोनों का सवाब मुर्दे को बराबर पहुंचाया जा सकता है। बहुत सी रिवायतों से ईसाले सवाब का जायज़ होना साबित होता है।

बक़िया रही ये दलील कि कुरआन मजीद में हैः "और ये कि इन्सानों को (ईमान के बारे में) सिर्फ़ अपनी ही कमाई मिलेगी।" (अन्नजमः 39)

यहां ईसाले सवाब से मना नहीं किया गया है। इसलिये कि ईसाले सवाब अपने बेटे और क़रीबी लोग ही करते हैं। तो इस तरह इनका ईसाल सवाब खुद उनके नेक कामों का ही क्रम होता है। इसलिये अस्ल में वह भी उनकी अपनी कमाई का हिस्सा हैं, जैसे कि सदक़े जारिया, कुवें इत्यादि के सिलसिले में हदीस में कहा गया है।

ईसाले सवाब का सुन्नत तरीक़ा

ईसाल चूंकि एक तरह की दुआ है। आदमी जिस तरह जनाज़े की नमाज़ में मय्यत के लिये दुआ करता है, इस्तिग़फ़ार करता है, इसी तरह वो नेक काम करे वो काम माली हो (जैसे ग़रीब को खाना खिलाना, कपड़े या नक़दी वग़ैरह देना या मस्जिद और दीनी मदरसों की तामीर में हिस्सा लेना) या वो काम बदन की इबादत की जुड़ा हुआ हो (जैसे कुरआन की तिलावत करना, नफ़िल रोज़े रखना, तस्बीह और कलिमा पढ़ना) और अल्लाह तआला से दुआ करे कि या अल्लाह! इन नेक कामों का मुझे जो सिला मिला है वो सवाब फ़लां शख़्स को पहुंचा दीजिये, तो अल्लाह की रहमत से उम्मीद है कि उस दुआ को कुबूल फ़रमायेगा। (शामीः 1/666) ईसाले सवाब की हक़ीक़त सिर्फ़ इतनी ही है, बक़िया जो मुख़तलिफ़ रस्में और सूरतें ईसाले सवाब की रायज हो गयी हैं, ये सब बेबुनियाद हैं, इन सब रस्मों से बचना चाहिये।

ईसाले सवाब के लिये शरीअत में न कोई ख़ास वक़्त या दिन मुक़र्रर है न कोई जगह या ख़ास इबादत। और न ही ये ज़रूरी है कि उसके लिये आदमी जमा हों, या खाना मिठाई इत्यादि रखी जाये और उस पर दम किया जाये। या किसी आलिम या हाफ़िज़ या क़ारी को बुलाया जाये और न ये ज़रूरी है कि पूरा कुरआन ख़त्म किया जाये या कोई ख़ास सूरह या दुआ मख़सूस गिनती में पढ़ी जाये। ये रस्में लोगों ने अपनी तरफ़ से ईजाद करके पाबन्दियां बढ़ा ली हैं। वरना शरीअत ने ईसाले सवाब को इतना आसान बनाया है कि जो जिस वक़्त चाहे, जिस दिन चाहे कोई भी नफ़िली इबादत करके उसका सवाब मरने वाले को पहुंचा सकता है।

उजरत देकर कुरआन पढ़वाना

मरने वाले को सवाब पहुंचाने के लिये उजरत देकर कुरआन करीम पढ़वाना एक आम बात हो गयी है। इस सिलसिले में अल्लामा शामी ने लिखा है किः "अगर उजरत देकर मरने वाले को सवाब पहुंचाने के लिये कुरआन करीम पढ़वाया जाये तो न पढ़ने वाले को इसका सवाब मिलता है और न जिसके नाम पढ़वाया जाये उसको सवाब मिलता है। बल्कि इसमें उजरत देने और लेने वाले दोनों गुनहगार होंगे।" (शामीः 6/56)

पर्दे के नाम पर बेपर्दगी

मौलाना अनवर जमाल

बुर्कों की तराश व ख़राश, कांट–छांट के अनगिनत तरीक़े व शक्लें गलियों व सड़कों पर नज़र आती हैं। उनमें से बहुत से शेरवानी की तरह बदन से चिपके हए, जिस्म के उतार–चढ़ाव और जिस्म की बनावट नुमायां किये हुए होते हैं। बहुतों की आस्तीनें नेट के कपड़ों से बने हुए होने की वजह से उनकी बाहें झलकती हुई रहती हैं। आपको बहुत सी बिना आस्तीनों के सिर्फ़ पीठ व सीने से चिपके हुए बिल्कुल नंगी बाहों व खुले चेहरें नज़र आयेंगे और अब इक्कीसवीं सदी के इन्टरनेट व कम्प्यूटर से डसी मुसलमान औरतों को पर्दा व हिजाब का बोझ बर्दाश्त नहीं। उन्हें चेहरों और जिस्मों को छिपाना रूढ़िवादिता लगता है। वो बेदीन, बेलिबास व नंगी औरतों के कंधे से कंधा मिलाने के जुनून में खुले चेहरा का बुरक़ा पहनने, पैन्ट शर्ट, फुल या हाफ़ स्कर्ट और टीशर्ट वग़ैरह छोटे से ख़ूबसूरत व कशिशदार रूमालों में चेहरे लपेटने का पर्दा आम कर रही हैं। इस तरह के फ़ैशनी पर्दे के रिवाज को देहात व शहर की जनता ही नहीं शरीफ़ घराने व ख़ानदान, दीनी वज़अदार ख़ानदान भी बड़ी संख्यां से स्वीकार कर रहे हैं। इसकी हद ये है कि मुस्लिम दुनिया को पश्चिम की भौतिक व कारोबारी सभ्यता के हमले ने मजबूर व बेबस बना दिया है। उन्हें न मुसलमान औरतों को मुसलमान बनाने की फ़िक्र है, न उन्हें सभ्य करने के लिये उनके पास समय है। स्त्री स्वतन्त्रता के ध्वजवाहक आक़ाओं के सामने घुटने टेक कर अपनी औरतों व लड़कियों को आज़ाद छोड़ने पर उतर आये हैं। उन्हें मुसलमान औरतों का बेपर्दा गली–कूचों, पार्कों व होटलों, चौपाटियों व किनारों पर घूमना अच्छा लगता है। वो उससे पैदा होने वाली समाजी बीमारियों की गंभीरता से नहीं डरते हैं और अब तो बहुत से मार्डन बुद्धिजीवियों ने इसके सही होने में क़ुरआन व हदीस की दलील भी तलाश कर ली हैं। उनकी दलीलों में से पुराने ज़माने में औरतों का मस्जिदों में जाना, जंगों व ग़ज़वों में ज़ख़्मियों की सेवा के लिये जंग में जाना और हज़रत उम्मुलमोमीनीन आयशा सिद्दीक़ा रज़ि0 का जंग–ए–जमल का नेतृत्व करने की दलील दी जाती है।

औरतों की नमाज़ उनके घरों में मस्जिदों से अफ़ज़ल है, जबकि मस्जिद–ए–नबवी की अपनी फ़ज़ीलत है। इसमें नमाज़ पढ़ने से सैंकड़ों गुना अज्र व सवाब के इज़ाफ़े का नबवी वादा और आप स0अ0 की इमामत में नमाज़ की अदायगी से इन्दल्लाह मिलने वाले शर्फ़ व क़ुबूल के आप स0अ0 ने औरतों को घरों में नमाज़ पढ़ने की ताकीद की है। इसका मतलब ये है कि मस्जिद में आकर नमाज़ पढ़ने की अगर आप स0अ0 ने किसी हद तक छूट दी है तो वो सिर्फ़ आपकी इमामत के साथ ख़ास थी, जो आप स0अ0 के बाद क़यामत तक कभी प्राप्त होने नहीं थी। अगर औरतों का मस्जिदो में नमाज़ अदा करना लाज़िमी होता, तो आप स0अ0 के दुनिया से जाने के बाद सहाबा किराम रज़ि0 अपनी औरतों को मस्जिदों मे जाने से मना नहीं करते और न हज़रत आयशा रज़ि0 सहाबा के इस काम के पक्ष में फ़रमातीं कि अगर अल्लाह के रसूल स0अ0 ज़माने में फ़साद की हालत देखते तो औरतों का मस्जिदों में जाना बिल्कुल बन्द हो गया होता और इस पर एक तरह से सहाबा कि सहमति हो चुकी है। पर्दे के हुक्म के आने से पहले जंगों में औरतों की शिरकत पर्दे के विरुद्ध दलील के तौर पर प्रस्तुत करना भी नासमझी की दलील होगी। क्योंकि पर्दे का हुक्म सन् पांच हिजरी में आया इससे पहले जंगों में शरीक होने वाली औरतों के काम से पर्दे के हुक्म को रद्द नहीं किया जा सकता।

जंग–ए–जमल में हज़रत आयशा रज़ि0 का नेतृत्व को पर्दे के खिलाफ़ दलील बनाना, इतिहास से अपरिचितता प्रकट करता है। हज़रत आयशा रज़ि0 का जंग में शरीक होना एक वास्तवतिकता है और इसमें आपका नेतृत्व भी सच है, लेकिन इससे ये बात कहां साबित होती है कि उन्होंने बेपर्दा होकर नेतृत्व किया था। वो तो ऊंट के "होदज" (जिसको ऊंट पर रखकर सवारी करते हैं) में होती थीं और होदज में भी इस तरह पर्दे में

होती थीं कि नज़दीक से भी ग़ौर से देखने में उनकी शख़्सियत दिखाई नहीं देती थी।

उप्रोक्त बयानों, दलीलों से अच्छी तरह साफ़ हो गया कि औरतों का घरों से बिना आवश्यकता और बिना पर्दे के बाहर निकलना हराम है। अगर मुसलमान औरतें इसके ख़िलाफ़ करती हैं, तो अल्लाह के हुक्म की नाफ़रमानी, उसकी लानत का शिकार और बहुत से फ़ित्ने फ़साद पैदा करने का कारण बन रही हैं और शायद इसी कारण जिस क़द्र किसी क़ौम व उम्मत की तबाही व बर्बादी चाहती है। तो खुद इस क़ौम की औरतें और लड़कियां सड़कों, गलियों चौक व चौराहे की ज़ीनत बनने लगती हैं, फिर इस नुक़्ते से क़ौम व उम्मत के ज़वाल व पतन का आरम्भ होता है। "इन्क़िलाबे उमम" ऐसी बहुत सी क़ौमों व मुल्कों के पतन का इतिहास प्रस्तुत करता है जिसका आधारभूत कारण उसकी औरतों का असीमित आज़ादी, बिना किसी डर के मर्दों से मेल–जोल था।

यूनानी सभ्यता व संस्कृति की उन्नति की लम्बी उम्र उसकी औरतों का अपने पर्दे की पाबन्दी से जुड़ा हुआ था। लेकिन जब वहां की औरतें बेपर्दगी, स्वतन्त्रता बिना रोक–टोक मर्द औरत का मेल–मिलाप की बीमारी का शिकार बनी तो फिर उस पुरानी व श्रेष्ठ सभ्यता व संस्कृति को पतन की ऐसी बीमारी लगी, और फिर इस प्राचीनतम् श्रेष्ठतम् सभ्यता व संस्कृति को पतन की ऐसी आंख लगी कि न वो आजतक अपने सुनहरे अतीत की पूछ–गझ में कामयाब हो सके और न वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जारी सभ्यता व संस्कृति की श्रेष्ठता की सूची में अपने नाम दर्ज करा सकी है। रोम जिसके अधीन आधी दुनिया थी। उसका धार्मिक व सांस्कृतिक दबदबा व शौकत आधी दुनिया पर थी। मगर जब रोमी औरतों व लड़कियों में बेपर्दगी की बला पैदा हुई, समाज व अख़लाक़ की परवाह किये बग़ैर मर्दों से बिना क़ैद मेल–जोल को उन्नति का आधार समझने लगीं, तो फिर इतनी बड़ी रोम सलतनत का क्या हश्र हुआ, लेखक लिखता है:

"लेकिन रोमियों में जब खुशहाली आयी तो उनमें बेमक़सद खेल व तमाशे पैदा हुए, उन्होंने फिर अपनी औरतों को घरों से निकालना शुरू किया, इस तरह उन्हें आज़ादी, सम्प्रभुत्व और जीवन के हर क्षेत्र में मर्दों के साथ बराबरी करने की क़ानूनी छूट मिली तो बिना देर किये हुए ये महान साम्राज्य देखते ही देखते मिट्टी में मिलने लगा और फिर वो इस तरह मिटा कि आज की दुनिया के नक़्शे पर मामूली मुल्क की हैसियत से दिखाई देता है।"

समाज के बिगाड़ व देश के पतन में औरतों की बेपर्दगी व आज़ादी और उनका मर्दों से उनका बिना रोक–टोक मिलन मानव इतिहास के हर दौर में रहा है। ख़ुद औरतों की आज़ादी का ध्वजवाहक लेकिन आज की नंगी औरतों के मर्दों से बेपर्दा मिलन व साथ ने पश्चिमी समाज में एक गंभीर बीमारियों को जन्म दिया है, जिसने हर होश वाले व्यक्ति को भयभीत कर दिया है। और हर उस शिक्षित देश व क़ौम व सभ्यता व समाज की चिन्ता करने वाले असामियों के दिलों व ज़हनों को झिंझोड़ दिया है, जो अब औरतों के हवाले से पश्चिम की सोच की कड़ी निंदा करने लगे हैं व उंगली उठाने लगे हैं।

पश्चिमी दुनिया के मुस्लिम समाज में बेपर्दगी और अधनंगेपन के रूझान भी तेज़ी से बढ़ रहा है। लड़कियां व औरतें अपना हुस्न व जमाल, जिस्म के अंग ज़्यादा से ज़्यादा खुले रखने के ज़्यादातर उपाय अपना रही हैं। उनके अन्दर पैन्ट व जींस, स्कर्ट, खुली बाहें व शार्ट स्कर्ट खूब प्रचलित है। खुली बाहें, व खुले चेहरे वाले बुर्क़े की ख़रीददारी ज़्यादा होती है। उन्हें नये तरह के फ़ैशनी अधनंगे लिबासों में लिपटी हुई बूटेदार रूमालों से आधा चेहरा छिपाये हर चौक व चौराहे पर शापिंग करते देखा जा सकता है।

अगर इसी का नाम पर्दा है तो इस्लाम का ऐसे पर्दे से कोई संबंध नहीं। न इस तरह के पर्दे का सुबूत क़ुरआन व हदीस की चौदह सौ साल की सांस्कृतिक रिवायतों में मिलता है। ये सब पश्चिमी समाज व सभ्यता के वो असर हैं, जिनसे आज देहात व शहर के हर मुस्लिम लड़के व लड़कियां अपने घरों में, टी.वी., इन्टरनेट और मोबाइलों से चौबीस घन्टे प्रभावित हो रही हैं। यहूदी, इन्गिलश और यूरोपीय चैनलों से प्रसारित होने वाली नंगी फ़िल्मों व किरदारों, हैवानियत भरे लैगिंक मामले देखकर, उसकी पैरवी में अपने शर्म व हया का लिबास उतार कर जिस्म व तन का लिबास भी फेंकने पर उतर आयी है और उनसे वो सभी जिन्सी बीमारियां जन्म ले रहीं हैं। जिनसे कोई भी समाज कहीं भी नेक व सेहतमन्द नहीं रह सकता है। उन्हीं समाजी बीमारियों ने पश्चिमी दुनिया को व्यवहारिक व सांस्कृतिक तौर पर ऐसा दीवाना बना दिया है .....

(शेष पेज 11 पर)

जुरैज की आज़माइश

अबुल अब्बास ख़ाँ

बात कई सौ साल पुरानी है, जुरैज नाम का एक नौजवान था, ज़ाहिरी हुस्न व बातिनी कमालों से परिपूर्ण, इबादत व बन्दगी में बेमिसाल, पाक दिल व पाक सीरत, बुराइयों से कोसों दूर, न कभी बुराई का ख़्याल आया, न कभी नामहरम पर नज़र डाली, दुनिया के झमेलों से दूर, एक सुनसान जगह पर उसने इबादतगाह बना ली थी, ज़िक्र व तिलावत में उसकी सुबह होती और खुदा के ख़ौफ़ में आंसू बहाते उसकी शाम होती, लोगों में उसकी शराफ़त की चर्चा था। उसकी पाकदामनी की क़समें खायी जातीं।

उसकी ज़िन्दगी में उसका अपना कोई न था। सिर्फ़ एक मां थी जिससे भी वो दूर रहता था और अपनी इबादतों में लगा रहता। इत्तेफ़ाक़ की बात एक दिन उसकी मां किसी ज़रूरत से उसकी इबादत गाह पहुंची, खुदा की बन्दगी में उसे इस क़दर मज़ा आ रहा था कि उसने मां की आवाज़ पर ध्यान न दिया और किसी हद तक ध्यान न देने की हालत में कह दिया कि मैं अभी अपनी इबादत में लगा हुआ हूं।

माँ! शायद उसे कुछ ज़रूरत थी, शायद वो अपने बेटे को देखना चाहती थी, शायद उसकी ममता ने उसको बेक़रार कर दिया था, लेकिन उस रूखे से जवाब पर उसका दिल मसोस कर रह गया, चुपचाप वापस चली गयी और दूसरे दिन फिर उसी वक़्त आयी लेकिन इत्तेफ़ाक आज भी वो अपनी इबादत में मशगूल था, फ़िर यही वाक़्या तीसरे दिन भी पेश आया। मां का दिल रेज़ा–रेज़ा हो गया। उसने अपनी आह को अपने सीने में दफ़ना दिया, लेकिन सब्र की शिद्दत के बावजूद आहों ने शब्दों का रूप धारण कर लिया और अचानक उसकी ज़बान से निकल गया कि "खुदाया उसकी ज़िन्दगी में उसे रुस्वा कर दे।"

इसी बस्ती में एक वेश्या भी रहती थी, कहते हैं कि उसके हुस्न में जादू का असर था, उसकी ख़ूबसूरती के सामने बड़े–बड़े सूरमा ढ़ेर हो जाते थे, उसने भी जब जुरैज की ख़ूबसूरती और उसकी पाकदामनी की मिसालें सुनीं तो वो तिलमिला उठी और जुरैज को अपने बस में करने की ठान ली, बस वो बन संवर कर, अपने यौवन को निखार कर, अपनी अदाओं को समेट कर जुरैज के सामने जा पहुंची, उस पर डोरे डालने लगी, अपनी दिलकश अदाओं से उसे लुभाने लगी, लेकिन वो खुदा का बन्दा अपने ईमान का पक्का था, उसने बेरुख़ी के साथ उस वेश्या को झिड़क दिया, उस पर बेशुमार लानतें भेजीं और अपनी इबादतगाह से दफ़ा कर दिया।

इस बेइज़्ज़ती पर उसका घमन्ड चूर–चूर हो गया, उसकी आंखों में ख़ून उतर आया, बदले की आग में वो झुलस उठी, लेकिन जिस्म की भूख ने उसे अन्धा बना दिया था, रास्ते में उसे एक चरवाहा नज़र आया, वो उससे गर्भवती हो गयी।

एक मुद्दत के बाद उसने बच्चे को जन्म दिया, समाज में चर्चा शुरू हो गयी कि ये बच्चा किसका है, उस वेश्या ने कह दिया कि ये बच्चा जरैज का है, जुरैज का नाम सुनते ही कोहराम मच गया, उसने जलने वालों की ज़बानें ज़हर उगलने लगीं, हर तफ़र थू थू का सिलसिला शुरू हो गया, एक भीड़ ने जुरैज की इबादतगाह को भी ढ़ा दिया उनको गालियां दीं, उनकी दाढ़ी के बाल नोचे और घसीट कर बाहर ले आये।

जुरैज की समझ में कुछ नहीं आ रहा था, क्यों ये लोग पागल हो गये हैं, क्यों उनकी जान के पीछे पड़े हैं, आख़िर उन्होंने कौन सा जुर्म कर दिया कि लोग अपने होश खो बैठे, उन्होंने पूछा कि ये सब तमाशा क्यों है? तुम सब को क्या हो गया? किसी ने बढ़ कर कहा कि तूने इस औरत के साथ मुंह काला किया है और ये बच्चा तेरी करतूतों का गवाह है, ये सुनते ही जुरैज के पैरों के नीचे से ज़मीन खिसक गयी, इतना बड़ा इल्ज़ाम सुनकर वो लरज़ उठा, उसके लाख इनकार के बावजूद किसी ने उसकी एक न सुनी, जरैज ने कहा कि ठीक है तुम्हें जो करना है कर लो लेकिन मुझे नमाज़ पढ़ लेने दो। जुरैज ने पूरे एकाग्रचित हो कर नमाज़ अदा की, अपने रब के सामने गिड़गिड़ा कर अपनी आजिज़ी ज़ाहिर की।

नमाज़ के बाद जुरैज ने कहा कि बच्चे को लाओ, उसने बच्चे के सर पर हाथ फेरा और पूछा कि बता तेरा बाप कौन है? खुदा की कुदरत, बच्चा बोल उठा कि फ़लां चरवाहा उसका बाप है। ये सुनना था कि लोग जुरैज के क़दमों पर गिर पड़े, उनके हाथ चूमने लगे, अपनी ग़लती पर माफ़ी मांगने लगे, सबने कहा कि हम तुम्हारी इबादत गाह को सोने का बना देंगे लेकिन जुरैज ने कहा कि उसे बस पहले जैसी हालत में कर दो।

जुरैज को भी एहसास हुआ कि मां का दिल दुखाने पर ये आज़माइश हुई है, लेकिन आज की नस्ल को ख़्याल ही नहीं गुज़रता कि वो अपने मां–बाप को कैसी–कैसी तकलीफ़ें देकर अपनी दुनिया और आख़िरत बर्बाद कर रहे हैं!!

जबान की नेकियां

ज़रा इन पर नज़र कीजिये

१— हर मुसलमान लड़के की बिस्मिल्लाह, बिस्मिलल्लाह से होती है। वो कुरआन पढ़ता है तो बार—बार अल्लाह का नाम ज़बान पर आता है।

२— इसको नमाज़ पढ़ने के लिये कहा जाता है तो अल्लाह का नाम हर बार आता है। नमाज़ शुरू अल्लाहु अकबर से होती है और उसके बाद ही अल्हम्दुलिल्लाहि से नमाज़ होती है और ख़त्म भी अस्सलाम अलैकुम वरहमतुल्लाहि पर होती है जिसका आख़िरी शब्द अल्लाह है।

३— इन्सान की ज़िन्दगी की शुरूआत भी अल्लाह के नाम से होती है, जब इसके कान में अज़ान दी जाती है या लोग पैदाइश की ख़बर सुनकर माशाअल्लाह या अल्हम्दुलिल्लाह के शब्द से मुबारक बाद देते हैं और ज़िन्दगी का ख़ात्मा भी अल्लाह के नाम से होता है। जब मरने वाला कलिमा तैय्यब या कलिमा शहादत पढ़ता है या किसी की मौत पर सुनने वाले इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन पढ़ते हैं, फिर उसकी जनाज़े की नमाज़ में अल्लाह का नाम लेते हैं।

४— ज़िन्दगी के सारे हिस्से और मौक़े चाहे वो सुनने से जुड़े हों या बोलने से, सब जगह अल्लाह का नाम लिया जाता है, ग़म हो या ख़ुशी, मौत हो या ज़िन्दगी, बीमारी हो या सेहत, खाना पीना हो या चलना—फ़िरना, सोना हो या जागना, नमाज़ हो या बातचीत, व्यापार हो या नौकरी, सामाजिक अवसर हो या इबादत के अवसर, हर जगह और हर मौक़े पर एक मुसलमान की ज़बान अल्लाह के मुबारक नाम से तर होती है।

आप जब खाना खायेंगे या पानी पियेंगे तो बिस्मिल्लाह कहकर और ख़ात्मे पर अल्हम्दुलिल्लाह कहेंगे।

आप जब किसी को ख़ुशी में देखेंगे तो माशाअल्लाह और ग़म में देखेंगे तो इन्नालिल्लाह कहेंगे।

आप किसी को सलाम करेंगे तो अस्सलामअलैकुम व रहमतुल्लाह कहेंगे। और जब जवाब देंगे तो वालैकुमस्सलाम व रहमतुल्लाह कहेंगे।

अल्लाह तआला हम सबको अपने नाम की दौलत अता फ़रमाये और हमारी ज़िन्दगी उस नाम से ऐसी ही जुड़ जाये कि सोते जागते, उठते बैठते, जीते मरते हमारी ज़बान पर यही मुबारक नाम जारी रहे। इसी में हम जियें और इसी नाम पर हमारी जान निकल जाये तब हम दीन व दुनिया की दौलतों से मालामाल हो जायेंगे।

मौलाना मुहमद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

VOLUME:06

MARCH 2014

ISSUE:03

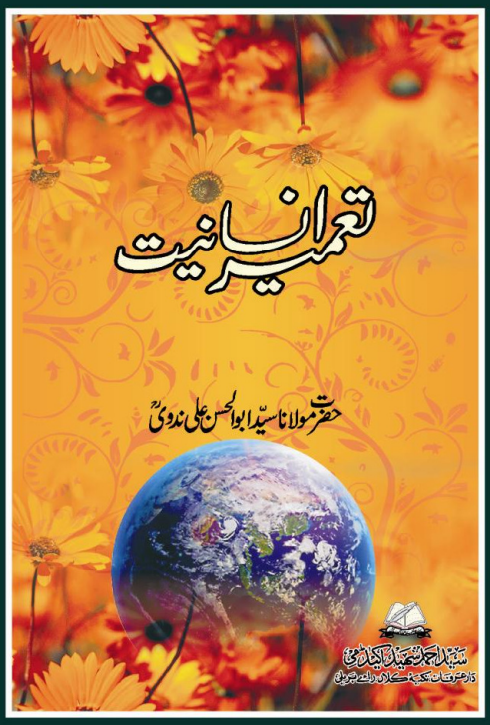

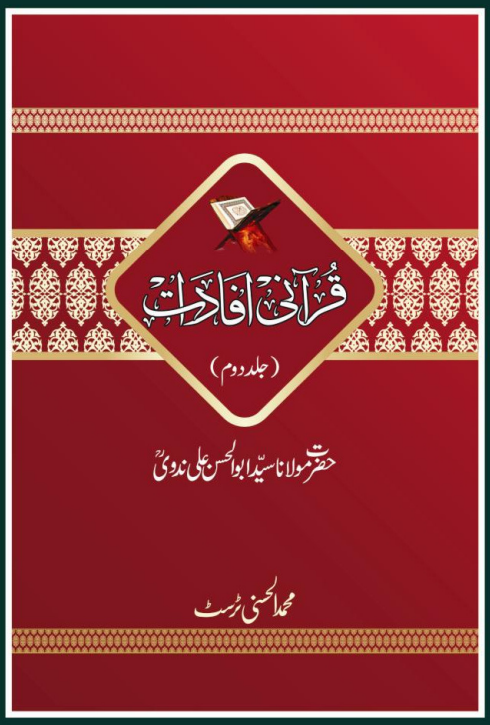

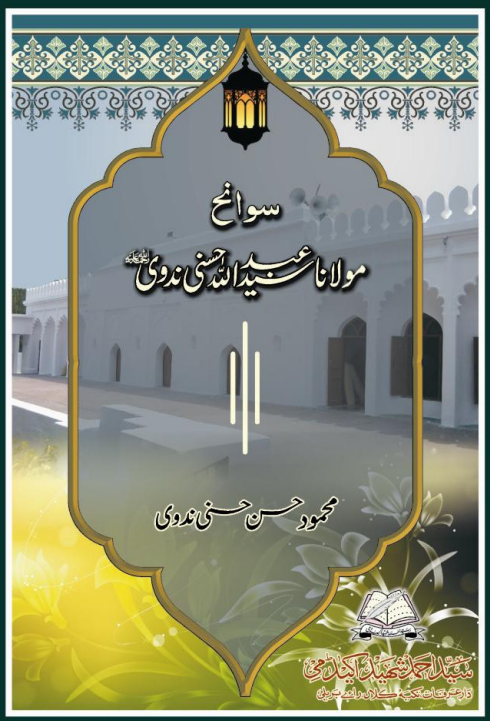

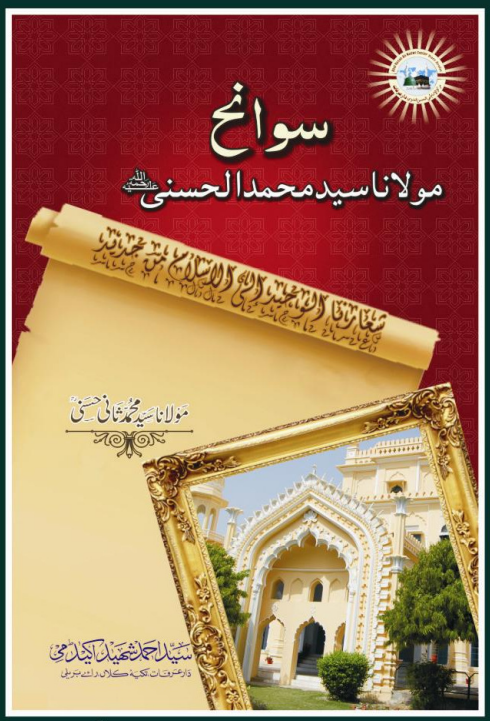

Sayyid Ahmad Shaheed Academy (Contact: 9919331295)

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile: 9918385097, 9918818558
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.